डाक पंजीयन क्र. : म.प्र./भोपाल/367/2024-26
आर.एन.आई. क्र. : 56428
टाइटिल कोड : MPHIN 09566
प्रेषण : प्रतिमाह दिनांक 7-8
वर्ष 37 अंक 06
(मानस समाचार/मानस भारती सहित)

प्रकाशन दिनांक 05 मार्च 2026
वर्ष 53 अंक 03
फाल्गुन-चैत्र, संवत् 2082-83
पृष्ठ संख्या 36
मूल्य 20/-

तुलसी मानस भारती

तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश की अध्यात्म, संस्कृति और संस्कार पत्रिका

सुनहु राम अब कहहुँ निकेता ।
जहाँ वसहु सिय लखन समेता ।।

पं. रमाकांत दुबे स्मृति समारोह - 2026

प्रवचन : दीदी भक्तिप्रभा जी

पूज्य दीदी प्रवचन देते हुए

तुलसी मानस भारती के फरवरी अंक का विमोचन करते हुए पूज्य दीदी
मा. श्री सुरेश पचौरी पूर्व केन्द्रीय मंत्री, श्री रघुनंदन शर्मा कार्याध्यक्ष, श्री कैलाश जोशी सचिव,
श्री प्रभुदयाल मिश्र प्रधान संपादक, श्री माधव सिंह दांगी, श्री देवेन्द्र कुमार रावत संपादक

पंचायत एवं समाज सेवा संचालनालय मध्यप्रदेश द्वारा समस्त पंचायतों एवं प्रौढ़ शिक्षा केन्द्रों के लिए, शिक्षा विभाग द्वारा समस्त महाविद्यालयों, उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों/हाई स्कूलों, शिक्षा महाविद्यालयों, बुनियादी प्रशिक्षण संस्थाओं, राज्य स्तरीय संस्थाओं तथा केन्द्रीय एवं जिला पुस्तकालयों के लिए, स्थानीय शासन विभाग द्वारा नगर निगमों एवं नगर पालिकाओं के लिए तथा आदिमजाति कल्याण विभाग द्वारा आदिवासी शालाओं के लिए स्वीकृत। उ.प्र. शासन द्वारा जिला पुस्तकालयों एवं वाचनालयों के लिए अनुमोदित।

तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश की मासिक मुखपत्रिका

तुलसी मानस भारती

संस्थापक

पं. गोरेलाल शुक्ल

http://webmail.manasbhawanbhopal.com/

संपादक मंडल

रघुनंदन शर्मा

प्रकाशक

कार्याध्यक्ष, तुलसी मानस प्रतिष्ठान, भोपाल

raghunandanbjp@gmail.com

प्रभुदयाल मिश्र

प्रधान संपादक

तुलसी मानस भारती

prabhu.d.mishra@gmail.com

राजेन्द्र शर्मा

संयोजक, तुलसी मानस प्रतिष्ठान, भोपाल

sharmarajendra8june@gmail.com

कैलाश जोशी

सचिव,तुलसी मानस प्रतिष्ठान, भोपाल

kailashjoshi58@gmail.com

देवेन्द्र कुमार रावत

संपादक

सहसचिव, तुलसी मानस प्रतिष्ठान, भोपाल

dkmrawat@gmail.com

परामर्श

विजयदत्त श्रीधर, रमेश शर्मा, माधव सिंह दांगी

ग्राहक शुल्क : वार्षिक रु. 500.00, पंचवर्षीय रु. 2500.00, आजीवन रु.5000.00 इस अंक का रु.20.00

विदेश में : फिजी आयरलैण्ड, मॉरीशस व अन्यत्र समुद्री डाक से (भारतीय रुपये में) वार्षिक रु. 1250.00, पंचवर्षीय रु. 5000.00 आजीवन रु. 12500.00, हवाई डाक से वार्षिक रु. 1500.00 पंचवर्षीय रु. 6000.00 आजीवन रु. 15000.00

पंजाब नेशनल बैंक खाता क्र. 1276000100137956 आईएफसी कोड PUNBO127600

सम्पर्क : तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश, मानस भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल–462002, दूरभाष : 0755–2661196, 2660010

tulsimanasbharati@gmail.com *www.manasbhawanbhopal.com*

अनुक्रमणिका

निर्वचन

श्रौत और स्मार्त सनातन साधना समन्वय	प्रभुदयाल मिश्र	03

आलेख

गिरि पर सकल करहिं अनुरागा	देवेन्द्र कुमार रावत	06

दुर्लभ शोध

रामाज्ञा प्रश्न	लोकनाथ द्विवेदी	10

आलेख

श्री राम का तारा को ज्ञान और वैराग्य का उपदेश	शकुंतला कालरा	15
भारतीय संस्कृति की वर्तमान प्रासंगिकता	डॉ. संगीता चौहान	21
गोस्वामी तुलसीदास की अवधी भाषा प्रकृति	प्रेम नारायण गुप्ता	24
रामायण के प्रणेता महर्षि वाल्मीकि एवं संत कवि तुलसीदास	गोवर्धन यादव	25

प्रतिष्ठान समाचार 35

निर्वचन

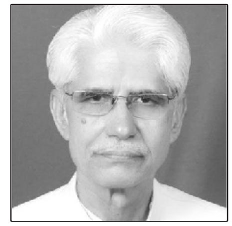

श्रौत और स्मार्त सनातन साधना समन्वय

रामचरित मानस के अयोध्याकाण्ड में वाल्मीकि जी से मिलकर श्रीराम सीता और लक्ष्मण के सहित अपने वनवास काल में निवास के लिए किसी ऐसे स्थान के पते का निवेदन करते हैं जहां तपस्वी मुनियों आदि की साधना में व्यवधान उत्पन्न न हो। इसके लिए चित्रकूट उपयुक्त स्थल बताने के पूर्व वाल्मीकि जी अपनी अदभुद विवेक व्यंजना से भारतीय श्रुति और स्मृति साधन तथा उपासना के ऐसे चौदह स्थान बताते हैं जो सनातन धर्म के सारभूत सोपान हैं । ज्ञान, भक्ति और योग के ये समन्वित मार्ग प्रत्येक मनुष्य के लिए सुलभ हैं क्योंकि पाँच ज्ञानेन्द्रिय, पाँच कर्मेन्द्रिय और चार अंतःकरण चतुष्टय अर्थात् मानवीय अस्तित्व के चौदह उपादान सभी को सुलभ हैं ।

सबसे पहले महर्षि वाल्मीकि श्री राम का निर्गुण–सगुण (विशिष्टाद्वैत) ब्रह्म रूप में साक्षात्कार करते हुए कहते हैं –

श्रुति सेतु पालक राम तुम
जगदीश माया जानकी
जो सृजति जगु पालति हरति
रुख पाइ कृपानिधान की।।
जो सहससीसु अहीस महिधरु
लखनु सचराचर धनी।
सुर काज धरि नरराज तनु
चले दलन खल निसिचर अनी।।

इसके बाद वे निर्गुण–निराकार (अद्वैत) ब्रह्म के रूप में उनका स्तवन करते हैं–

राम सरूप तुम्हार बचन अगोचर
बुद्धि पर/अबिगत अकथ अपार नेति
नेति नित निगम कह।।
जग पेखन तुम्ह देखनि हारे।
बिधि हरि संभु नचावनि हारे।।
तेउ न जानहिं मरमु तुम्हारा।
और तुम्हहि को जाननिहारा।।
सोइ जानइ जेहि देहु जनाई।
जानत तुम्हहि तुम्हइ होइ जाई।।
तुम्हरिहि कृपाँ तुम्हहि रघुनंदन।
जानहिं भगत भगत उर चंदन।।
चिदानंद मय देह तुम्हारी।
बिगत बिकार जान अधिकारी।।

तदनंतर स्मृतियों के अवतारवाद के सगुण–साकार ईश्वर के रूप में उन्हें इस प्रकार संवोधित करते हैं –

नर तनु धरेहु संत सुर काजा।
कहहु करहु जस प्राकृत राजा।।

त्रिकालज्ञ मुनि वाल्मीकि यहाँ जीव मात्र के

कल्याण के लिए भी जैसे सजग हैं अतः वे दश इंद्रियों और मन, बुद्धि, चित्त एवं अहंकार के चौदह स्थानों का संकेत निम्न संदर्भों से करते हैं

श्रोत्र (कान) :

जिन्ह के श्रवन समुद्र समाना ।
कथा तुम्हारि सुभग सरि नाना।।
भरहिं निरंतर होहिं न पूरे।
तिन्ह के हिय तुम्ह कहुँ गृह रूरे।

चक्षु (आँखें) :

लोचन चातक जिन्ह करि राखे।
रहहिं दरस जलधर अभिलाषे।।
निदरहिं सरित सिंधु सर भारी ।
रूप बिंदु जल होहिं सुखारी।।
तिन्ह कें हृदय सदन सुखदायक।
बसहु बंधु सिय सह रघुनायक।।

रसना (जीभ/स्वाद) :

तुम्हहि निबेदित भोजन करहीं।
प्रभु प्रसाद पट भूषन धरहीं

नासिका :

प्रभु प्रसाद सुचि सुभग सुबासा।
सादर जासु लहइ नित नासा।।

त्वचा (स्पर्श) :

सीस नवहिं सुर गुरु द्विज देखी।
प्रीति सहित करि बिनय बिसेषी।।
कर नित करहिं राम पद पूजा।
राम भरोस हृदय नहिं दूजा।।

कर्मेंद्रियाँ वाक् (वाणी) :

जसु तुम्हार मानस बिमल हंसिनि जीहा जासु।
मुकताहल गुन गन चुनइ राम बसहु हियँ तासु।।
मंत्रराजु नित जपहिं तुम्हारा।
पूजहिं तुम्हहि सहित परिवारा।।

पाणि (हाथ) :

तरपन होम करहिं बिधि नाना।
बिप्र जेवाँइ देहिं बहु दाना।।
तुम्ह तें अधिक गुरहि जियँ जानी।
सकल भायँ सेवहिं सनमानी।।
मंत्रराजु नित जपहिं तुम्हारा।
पूजहिं तुम्हहि सहित परिवारा।।

पाद (पैर) :

चरन राम तीरथ चलि जाहीं।
राम बसहु तिन्ह के मन माहीं।।
सबु करि मागहिं एक फलु राम चरन रति होउ।
तिन्ह कें मन मंदिर बसहु सिय रघुनंदन दोउ।।

पायु :

सरगु नरकु अपबरगु समाना।
जहँ तहँ देख धरें धनु बाना।
करम बचन मन राउर चेरा।
राम करहु तेहि कें उर डेरा ।

उपस्थ :

उत्सर्जन और जनन -
जननी सन जानहिं परनारी।
धनु पराव बिष तें बिष भारी ।
अंतःकरण चतुष्टय

मन :

काम कोह मद मान न मोहा ।
लोभ न छोभ न राग न द्रोहा।।
जिन्ह के कपट दंभ नहिं माया।
तिन्ह कें हृदय बसहु रघुराया।।

बुद्धि :

सब के प्रिय सब के हितकारी।
दुख सुख सरिस प्रसंसा गारी।।
कहहिं सत्य प्रिय बचन बिचारी।

जागत सोवत सरन तुम्हारी।।

चित्त :

तुमहिं छांडि गत दूसर नाहीं।
राम बसहु तिन्ह के मन माहीं।।

अहंकार :

जे हरषहिं पर संपति देखी।
दुखित होहिं पर बिपति बिसेषी।।
जिन्हहि राम तुम्ह प्रानपिआरे।
तिन्ह के मन सुभ सदन तुम्हारे।।

दोहा :

स्वामि सखा पितु मातु गुर
जिन्ह के सब तुम्ह तात।
मन मंदिर तिन्ह के बसहु
सीय सहित दोउ भ्रात।।
अवगुन तजि सब के गुन गहहीं।
विप्र धेनु हित संकट सहहीं।।
नीति निपुन जिन्ह कइ जग लीका।
घर तुम्हार तिन्ह कर मनु नीका।।
गुन तुम्हार समुझइ निज दोसा।
जेहि सब भाँति तुम्हार भरोसा।।
राम भगत प्रिय लागहिं जेही।
तेहि उर बसहु सहित बैदेही।।
जाति पाँति धनु धरमु बड़ाई।
प्रिय परिवार सदन सुखदाई।।
सब तजि तुम्हहि रहइ उर लाई।
तेहि के हृदय रहहु रघुराई।।

दो -

जाहि न चाहिअ कबहुँ कछु
तुम्ह सन सहज सनेह।
बसहु निरंतर तासु मन
सो राउर निज गेहु।।

महामुनि के इन कथनों के व्यंजनार्थ में जाते हुए यह स्पष्ट होता है कि इसमें योग दर्शन के आचरण पक्ष की शिक्षा के यम (सामाजिक व्यवहार) —अहिंसा, सत्य, ब्रहचर्य, अस्तेय, अपरिग्रह तथा नियम (वैयक्तिक आचरण) के शौच, संतोष, स्वाध्याय, तप, और ईश्वर प्रणिधानता के दश सिद्धांत समाविष्ट हो जाते हैं जो सनातन धर्म के दश स्तम्भ (धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इंद्रिय निग्रह, बुद्धि, विद्या, सत्य और अक्रोध में भी समाहूत होते हैं —

धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

मनुस्मृति ६/९२

इस प्रकार महर्षि वाल्मीकि का यह ज्ञान उनकी परमात्मा श्रीराम की सन्निकटता और भगवत् साक्षात्कार दोनों ही स्थितियों का बोध कराता है। यह उनके द्वारा विश्व के प्रथम महाकाव्य रामायण के रचनाकार होने की पात्रता का भी परम प्रमाण कहा जा सकता है।

सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम् ।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति।।

गीता ३—१६

परमात्मा के हाथ और पैर सब ओर, उसकी आँखें, सिर और मुख सब ओर, उसके कान सब ओर हैं और वह संसार में सब कुछ व्याप्त करके स्थित है।

देवेन्द्र कुमार रावत

गिरि पर सकल करहिं अनुरागा

श्री रामचरितमानस में पर्वतों से सभी प्रेम करते थे। यह कथा बालकांड में पर्वतराज हिमाचल के यहाँ उमा जी के अवतरण प्रसंग में आयी है। वर्णन आता है :–

सहज बयरु सब जीवन त्यागा, गिरि पर सकल करहिं अनुरागा।

अर्थात् जब से उमा जी का अवतरण हिमाचल के यहां हुआ तब से सब जीवों ने अपना स्वाभाविक बैर छोड़ दिया और पर्वतों से सभी प्रेम करते हैं। यहां अर्थात् पार्वती जी के एक और आध्यात्मिक स्वरूप का नाम श्रद्धा है और भगवान शिव साक्षात् विश्वास है। इसी श्रद्धा के कारण हम कण–कण में ईश्वरीय सत्ता का आभास करते हैं। जब जीवों के हृदय में सात्विक श्रद्धा का प्रवाह उत्पन्न होता है, तब जीव को अपने सहज स्वरूप का बोध होने से सबके प्रति प्रेम उत्पन्न हो जाता है। यही आध्यात्मिक अनुभव उमा जी के जन्म समय के बाद प्राणी मात्र को हुआ। किंतु यह अतीत की कथा है पर इसमें स्पष्ट होता है कि हृदय में आज भी पर्वतों के प्रति हमारे हृदय में श्रद्धा होने से पर्वतों के प्रति जो प्रेम होगा तो उसका लाभ संपूर्ण प्राणी मात्र को मिल सकता है किन्तु पर्वतों के प्रति हमारी भावना पवित्र होनी चाहिए क्योंकि वे हमारे कल्याण के हेतु हैं, भोग के साधन नहीं है भगवान श्री कृष्ण ने इसलिए ही श्रीमद् भगवत गीता में –

यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः

अर्थात् समस्त यज्ञों में पवित्र में नाम का कीर्तन जप तथा अचलों में हिमालय हूँ तो जो पर्वत स्वयं प्रभु का ही स्वरूप है वह हमारी सात्विक श्रद्धा का स्वरूप ही होना चाहिए किंतु इसके विपरीत हम अपने अध्यात्म ज्ञान के अभाव में पश्चिमी प्रभाव में आकर भोग विलास हेतु विश्रामालयों की रचना करते हैं। हम यह भी भूल गए कि पर्वत नदियों के उद्गम स्थल होते हैं। जहाँ हमारी नदियाँ उद्गम स्थलों पर ही हमने अपवित्र कर दी हैं तो वह कैसे आगे पवित्र बनी रह सकती हैं इन्हें पवित्र बनाये रखना हमारे प्रशासकों के कर्तव्यों में भी आता है। इस संदर्भ में मानस में भी

वर्णन आया है :

जब तें उमा सैल गृह जाईं।
सकल सिद्धि संपति तहँ छाईं।।
जहँ तहँ मुनिन्ह सुआश्रम कीन्हे।
उचित बास हिम भूधर दीन्हे।।

अर्थात् पर्वतीय क्षेत्र तथा नदियों के उभय तटों पर मुनियों ने सुंदर आश्रम बना लिए और राजा हिमाचल ने उन सभी मुनियों को उचित स्थान दिये। यही कारण था, कि तब इन क्षेत्रों में सात्विक प्रभाव से समस्त प्राणी मात्र सुखी रहते थे। इस संदर्भ में महर्षि वाल्मीकि आश्रम की प्राकृतिक सुंदरता का वर्णन आया है:–

देखत बन सर सैल सुहाए।
बालमीकि आश्रम प्रभु आए।।
राम दीख मुनि बासु सुहावन।
सुंदर गिरि काननु जलु पावन ।।
सरनि सरोज बिटप बन फूले।
गुंजत मंजु मधुप रस भूले।।
खग मृग बिपुल कोलाहल करहीं।
बिरहित बैर मुदित मन चरहीं।।

अर्थात् सुंदर वन तालाब और पर्वत देखते हुए प्रभु श्री रामचंद्र जी वाल्मीकि के आश्रम में आए। रामचंद्र जी ने देखा कि मुनि का निवास स्थान बहुत सुंदर है। जहां सुंदर पर्वत वन और पवित्र जल है। सरोवरों में कमल और वनों में वृक्ष फूल रहे हैं और मकरंद में मस्त हुए भौंरे सुंदर गुंजार कर रहे हैं। बहुत से पक्षी और पशु कोलाहल कर रहे हैं और बैर से रहित होकर प्रसन्न मन से विचरते हैं ऐसे आश्रम को देखकर श्री राम जी को प्रसन्नता हुई वर्णन आया है :–

सुचि सुंदर आश्रमु निरखि हरषे राजिवनेन।
सुनि रघुबर आगमनु मुनि आगें आयउ लेन।।

अर्थात् पवित्र सुंदर आश्रम को देखकर श्री राम जी हर्षित हुए।

इस कथा प्रसंग की दृष्टि से वर्तमान में पर्वतीय तथा नदियों के उभय तटों को देखें तो वनों की कटाई और जैव विविधता की हानि के कारण ही हमारा पारिस्थितिक तंत्र प्रभावित हुआ है। जिसके कारण ही अति वर्षा से बाढ़, भूस्खलन, पर्वतीय स्थलों पर भारी विनाश लीला को हम प्रत्यक्ष देख रहे हैं। यदि हम अभी सावधान नहीं हुये तो ग्लोबल वार्मिंग के कारण ग्लेशियर पिघल जाएंगे और तटीय तथा मैदानी क्षेत्रों में जल प्रलय की तबाही भी देखने को मिलेगी। हमें अब यह ज्ञान होना चाहिए, कि पर्वतों पर इतना हिम जमा है जो पृथ्वी को पानी–पानी कर सकता है। अतः प्रकृति के प्रति हमें श्रद्धा इसलिए भी रखनी चाहिए कि यही हिम पिघलकर ग्रीष्म काल में हमारी नदियों के जल का अगाध स्रोत होता है। प्रकृति हमारे लिए तापमान का इतना संतुलन बनाए रखे हुए है, तो हमारे जीवन शैली भी ऐसी ही संतुलित होनी चाहिए कि हम उसके तापमान में असंतुलन की स्थिति उत्पन्न न करें। अन्यथा इसके दुष्परिणाम भयंकर रूप से सामने आएंगे। भगवान श्री कृष्ण श्रीमद् भागवत में गोवर्धन धारण प्रसंग के अंतर्गत यही चेतावनी देते हुए कहते हैं :–

एषोऽवजानतो मर्त्यान् कामरूपी वनौकसः।
हन्ति ह्यस्मै नमस्यामः शर्मणे आत्मनो गवाम।।

अर्थात् जो इन पर्वतों का निरादर करते हैं, उन्हें ये नष्ट कर डालते हैं। इसके विपरीत यदि हमारी श्रद्धा के केंद्र में ये पर्वत रहते हैं तो इनसे प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष होने वाले लाभों से संपूर्ण जड़ चेतन सुखी होता है। यही कारण है कि गोवर्धन धारण प्रसंग में भगवान श्री कृष्ण से जब श्रीमद्

भागवत में पिता श्री नंद बाबा ने यह कहा :

पर्जन्यो भगवानिन्द्रो मेघास्तस्यात्ममूर्तयः।
तेऽभिवर्षन्ति भूतानां प्रीणनं जीवनं पयः।।

अर्थात नंद बाबा ने कहा बेटा भगवान इंद्र वर्षा करने वाले मेघों के स्वामी है यह मेघ उन्हीं के अपने रूप है। वे समस्त प्राणियों को तृप्त करने वाला एवं जीवनदान करने वाला जल बरसाते हैं। तब भगवान श्री कृष्ण ने नंद बाबा से वर्षा होने के संदर्भ में जो वैज्ञानिक व्याख्या की है, वह वर्तमान में पर्यावरण की दृष्टि से बहुत प्रासंगिक है। वे कहते हैं

कर्मणा जायते जन्तुः कर्मणैव विलीयते।
सुखं दुःखं भयं क्षेमं कर्मणैवाभिपद्यते।।

अर्थात् हे पिताजी प्राणी अपने कर्म अनुसार पैदा होता है और कर्म से ही मर जाता है। उसे उसके कर्म के अनुसार ही सुख–दुख, भय और मंगल के निमित्तों की प्राप्ति होती है। इसलिए जब सभी प्राणी अपने–अपने कर्मों का फल भोग रहे हैं।

किमिन्द्रेणेह भूतानां स्वस्वकर्मानुवर्तिनाम्।
अनीशेनान्यथा कर्तुं स्वभावविहितं नृणाम्।।

अर्थात् हमें इंद्र की तब क्या आवश्कता हो सकती है ? हे पिताजी, पूर्व संस्कार बस मनुष्य के कर्म फल को जब वे (इंद्र) बदल ही नहीं सकते हैं। तो उनसे क्या प्रयोजन ? यहाँ भगवान श्री कृष्ण स्पष्ट करते हैं कि यह जानकर तो वर्तमान में ही सही हम अपने कर्म भगवान गोवर्धन की कृपा से सुधार सकते हैं। साथ ही हमारे जीवन में अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय हो जाने से यह बात भी समझ में आ जाती है कि किसी भी क्षेत्र में वर्षा पर्वतों के ही कारण होती है। भूगोल वेत्ता भी यही कहते हैं कि जब पृथ्वी से उठने वाली वाष्प भरी संवाहनिक धाराएं इन पर्वतों से टकराती हैं तो वर्षा कर देती हैं दूसरे जीवन शैली के संतुलन से ही तापमान का संतुलन बना रहता है। जिस के कारण न तो अति वर्षा होती है न अल्प। यही कारण है कि "राम राज्य में माँगे बारिध देई जल रामचंद्र के राज" अर्थात् जितनी आवश्यकता होती थी उतनी ही वर्षा होती थी। इससे स्पष्ट है कि पर्वतों पर अनुराग प्रसंग को धार्मिक दृष्टि से ही नहीं वैज्ञानिक दृष्टि से भी समझने का ज्ञान परम आवश्यक है। मानस भी यही कहती है कि –

"बिनु विज्ञान कि समता आवइ"

अर्थात् विज्ञान (तत्वज्ञान) के बिना क्या समभाव आ सकता है ? तो ये तत्वज्ञान त्रेतायुग में इन पर्वतों पर ऋषि मुनियों के आश्रमों में ही मिलता था। जिससे माया–मोह दूर हो जाते थे इसे आज के संदर्भ में देखे तो यह माया ही हम मनुष्य को इतनी भ्रमित कर रही है कि हम स्वयं के विनाश के लिए भस्मासुर बनने को तैयार बैठे हैं। हमारा मोह (अज्ञान) हमें यह सब समझने के लिए रोक रहा है जबकि पर्वतीय भागों में तपस्यारत तपस्वियों के तप के प्रभाव से यह दोनों समूल नष्ट हो जाया करते थे। वर्णन आया है कि –

गयउ गरुड़ जहँ बसइ भुसुंडा।
मति अकुंठ हरि भगति अखंडा।।
देखि सैल प्रसन्न मन भयऊ।
माया मोह सोच सब गयऊ।।

अर्थात गरुड़ जी का नीलांचल पर्वत को देखकर ही मन प्रसन्न हो गया और उसके दर्शन से ही सब माया मोह तथा सोच जाता रहा ।

अतः स्पष्ट है कि पर्वत तप के लिए हैं भोगों के लिए नहीं। पर्वतीय भागों में पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए हमारी सनातन संस्कृति की इस संयम रेखा का उल्लंघन नहीं होना चाहिए, अन्यथा भारी विनाश से सब कुछ नष्ट हो सकता है ।

महेंद्रा स्कावयर्स, फ्लेट नं. 107 बावडिया कला भोपाल मो. नं. 9893119507

कीर्तिशेष
लोकनाथ द्विवेदी 'सिलाहकारी'

रामाज्ञा प्रश्न

इसमें ७ सर्ग हैं और प्रत्येक सर्ग में सात सात सप्तक हैं तथा प्रत्येक सप्तक में सात सात दोहे हैं । इस प्रकार इस प्रवन्ध में कुल ३४३ दोहे हैं ।

इस प्रवन्ध की रचना के उदेश्य के विषय में गोसाईं तुलसीदास जी ने स्वयं ही अन्त में लिखा है:–

जो जेहिं काजहिं अनुहरइ सो दोहा जब होइ।
सगुन समय सब सत्य सब कहब राम गति होइ।।
गुन विश्वास विचित्र मनि सगुन मनोहर हारु।
तुलसी रघुबर भगत-उर, विलसत विमल विचारु।।

(सर्ग ७ सप्त७ दोहा ७)

किसी सगुन के प्रश्न का उत्तर निकालने के हेतु इसकी रचना की गई है। कहा जाता है कि इसकी रचना तुलसीदास जी ने अपने काशी निवासी मित्र गंगाराम जी ज्योतिषी के लिए उस समय की थी जब वे राजघाट के तत्कालीन राजपूत राजा के शिकार को गये राजकुमार के समय पर न लौटने से और किसी संकट में पड़ने के समाचार से व्याकुल हो उसके लौटने आदि का वृत्त न बतला सकने पर दंडित होने के भय से कम्पित थे। इस प्रबन्ध पर से राजकुमार के सकुशल दूसरे दिन सन्ध्या के समय घर लौटने का मुहूर्त बतलाया गया और दूसरे दिन उसके सचमुच सकुशल लौटने पर राजा ने प्रसन्न हो गंगाराम जी को एक लाख रुपया दिये। गंगाराम जी के आग्रह से तुलसीदास जी ने उक्त निधि में से बारह हजार रुपये लिये जिनसे उन्होंने मारुति जी के १२ मंदिर बनवा दिये, जो अब भी विद्यमान हैं । उस प्रवन्ध को गंगाराम जी के हेतु लिखने का प्रमाण उसके निम्न लिखित दोहे में भी प्राप्त होता है–

सगुन प्रथम उनचास सुभ तुलसी अति अभिराम।
सब प्रसन्न सुर भूमि-सुर गो-गन गंगाराम।।

(रामाज्ञाप्रश्न सर्ग १ सप्तम दोहा)

इस रचना की तिथि के बारे में स्वयं तुलसीदास जी लिखते हैं :–

सगुन सत्य ससि नयन गुन
अवधि अधिक नय बान।
होइ सुफल सुभ जासु जस
प्रीति प्रतीति प्रमान ।।

(रा.प्र. सर्ग ७ सप्तक ७ दोहा ३)

चन्द्रमा, नेत्र, गुन, नीति और बाण के आधिक्य की अवधि (अन्तर) में यह सगुन (भाल) जिसका सुयश यह है कि प्रीति प्रतीति के अनुसार (परिमाण से) सुफल होती है। इसमें चन्द्र से १, नेत्र से २, गुण से ३ नीति से ४ और बाण के ५ के अन्तर से १ का दोष होने से १२६१ अंक निकलता है जो (अंकानाम् बामतो गतिः) के नियमानुसार अंक को समय निकालने के हेतु अन्त से प्रारम्भ कर रखने से संवत १६२१ वि. स्पष्ट ही निकलता है।

इस पर ध्यान न देकर इसकी रचना का समय विद्वानों ने अटकल से लगा कर दिया है। वेणी माधव दास के तथाकथित मूल गोसाई चरित में इसका रचना काल संवत् १६६६, डॉ. पीताम्बर दत्त बड़वाल और बा. श्याम सुन्दर दास ने गोस्वामी तुलसी दास के इस ग्रन्थ में उसका रचना काल संवत १६५५ लिखा है और पंडित रामनरेश त्रिपाठी ने सं. १६२० वि. लिखा है। इधर ग्रंथकर्ता के स्वयं उपर्युक्त दोहे में रचना–काल १६२१ विक्रमी संवत् स्पष्ट होने से इन मतों की आलोचना व्यर्थ ही है।

इसके तीन चक्र १ से ७ तक के अंक वाले हैं। इन पर क्रम से किसी एक अंक पर प्रश्नकर्ता अपनी अंगुली रखता है। तीनों में से एक–एक अंक लेने पर तीन अंक निकलते हैं। प्रथम अंक सर्ग, द्वितीय अंक सप्तक और तृतीय अंक दोहे का सूचक समझा जाता है। इस प्रकार किसी सर्ग के किसी सप्तक का जो एक दोहा निकलता है वही प्रश्न कर्ता के प्रश्न का उत्तर होता है, जिससे उसको शुभ अथवा अशुभ फल का संकेत प्राप्त होता है। तीन घड़ी, तीन दिन, तीन माह अथवा तीन वर्ष में कार्य अवश्य ही होता है परन्तु श्रद्धावान ही राम की कृपा से इसका लाभ प्राप्त करते हैं ।

इस पर से फलाफल निकालने की एक विधि और भी है जो निम्न लिखित है :–

अष्टोत्तर सत कमल फल मुष्टि तीन प्रमान ।
सप्त सप्त तजि सेष को राखहि सब विलगान।।
प्रथम सर्ग जो सेष रहि दूजे सप्तक होइ ।
तीजे दोहा जानिये सगुन विचारव सोइ।।

१०८ कमल के फूल लेकर प्रश्नकर्ता उनमें से क्रमशः तीन बार एक एक मुट्ठी निकाल कर अलग अलग रखे। पहले प्रथम मुट्ठी के फूलों को सात का भाग देकर जो अन्त में शेष रहे उसको सर्ग जाने। इसी प्रकार दूसरी मुट्ठी के फूलों को सप्तक और तीसरी मुट्ठी के फूलों को दोहा का संकेत जाने। इस प्रकार इस पद्धति से भी किसी सर्ग विशेष के जिस सप्तक का जो दोहा निकलता है वही सगुन विषयक फलाफल जानने के अभिलाषी प्रश्नकर्ता के प्रश्नों का उत्तर निकलता है। इसके अर्थ में और भाषा में सगुन का स्पष्ट संकेत निकल आता है।

सगुन–माला या शकुनावलि के रूप में यद्यपि इसमें राम–कथा, वाल्मीकि रामायण के कथानक को ले मुक्तकों में दिया है पर न तो उसमें प्रबंध काव्य की धारा अथवा शैली है और न भावोत्कर्ष की

छटा तथा कवि–कौशल ही है। इसमें रसोद्रेक का अभाव है। इसके दोहे दोहावली में भी पाये जाते हैं। सप्तम सर्ग का तृतीय दोहा तो वैराग्य संदीपिनी और दोहावली दोनों में प्रथम दोहा है। इसमें सातों सर्गों के दोहों में राम–कथा का विभाजन इस प्रकार है:–

प्रथम सर्ग – बाल कांड
द्वितीय सर्ग – अयोध्या कांड और आरण्यकांड पूर्वार्ध
तृतीय सर्ग – अरण्य कांड उत्तरार्ध और किष्किन्धा कांड
चतुर्थ सर्ग – बाल कांड
पंचम सर्ग – सुंदर कांड और लंका कांड
षष्ठ वर्ग – उत्तर कांड
सप्तम सर्ग – स्फुट

इसमें आनन्दमय घटना के संकेत के हेतु चतुर्थ सर्ग में बाल कांड की कथा लिखी गई है, जिससे स्पष्ट है कि यह प्रधान रूप से शकुनावलि की पोथी है । तुलसीदास जी ने स्वयं ही इसके विषय में कहा है:–

सु दिन सांझ पोथी नेवति पूजि प्रभात सप्रेम ।
सगुन विचारव चारु-मति सादर सत्य सनेम।।
(सर्ग ७ सप्तक ७ दोहा १)

इसकी भाषा भी अवधी, ब्रज और बुंदेलखेडी का मिश्रण है जिसमें अपभ्रंश का पुट है । इसकी भाषा से पता चलता है कि तुलसीदास का इसकी रचना के समय भाषा पर अधिकार न था और साथ ही नव–सिखिये कवि की तरह उन्हें अनुप्रास जोड़ने का शौक था। उदाहरण स्वरूप निम्नलिखित दोहे देखिये :–

गुरु सर सुइ सिन्धुर वदन
ससि सुर सरि सुर-गाइ ।
सुमिरि चलहु नग मुदित मन
होइ हि सुकृत सहाइ।।
दसरथ-राज न ईति-भय
नहि दुख दुरित दुकाल ।
प्रमुदित प्रजा प्रसन्न सब
सब सुख सदा सुकाल।।
खरदूखन देखी दुखित
चले साजि सब साज ।
अनरथ असगुन अघ असुभ
अनभल अखिल सकाज।।(३,१,४)
दस दिसि दुख दारित दुरित,
दुसह दसा दिन दोष
फे-रे लोचन राम अब
सन्मुख साज सरोष । (७,५,२)

फिर भी कृति गोस्वामी तुलसीदास जी जैसे प्रतिभा–सपन्न होने से उसके अनेक मुक्तक उच्च कोटि के हैं जिनमें कलात्मक व्यंजना और भावानुकूल भाषा है जैसे –

गुरु आयसु धाये भरत निरखि नगर नर-नारि।
सानुज सोचत पोच विधि लोचन मोचत वारि।।
विटप वेलि फूलहिं फलहिं सीतल सुखद समीर।
मुदित विहंग मृग मधुप गन वन पालक दुउ वीर।
बालक कोशल पाल के सेवक-पाल कृपाल ।
तुलसी मन-मानस वसत मंगल मंजु मराल ।।
सैल सरितवर बाग वन मृग विहंग बहु रंग ।
तुलसी देखत जात प्रभु मुदित गाधि-सुत-संग ।।
नीच निसाचर मीचु-बस चले साजि चतुरंग।
प्रभु प्रताप पावक प्रवल उड़ि उड़ि परत पतंग ।।
(5,6,5)

इसमें रामचरित मानस की कथा से अन्तर है। इसका प्रारम्भ दसरथ जी के सुखी सम्पन्न राज्य

के वर्णन से और अंध मुनि के उसके पुत्र को शब्द भेदी बाण द्वारा भूल से मारे जाने पर पुत्र–शोक में मृत्यु के श्राप से हुआ है और रावण का नाश कर अयोध्या में राज करने के कुछ दिन पीछे गर्भवती सीता को राम द्वारा प्रजा–जन के झूठे कलंकारोप से राज्यादर्श की रक्षा–हेतु इच्छा न रहते हुए भी दुखी हृदय से वाल्मीकि के आश्रम में त्यागे जाने, लव–कुश के वहां उत्पन्न होने और वाल्मीकि की रामायण का गान गाने के द्वारा श्री राम से परिचित होने एवं वाल्मीकि के साथ राम की राज–सभा में सीता जी का कलंक न सह्य होने से पृथ्वी में प्रवेश वर्णन कर समाप्त होती है। इस सम्बन्ध में तुलसीदास जी ने गर्भिणी निष्कलंक सीता जी के अकारण त्यागने के विषय में अपना जो मत प्रकट किया है, वह स्पष्टता और निर्भीकता पूर्वक केवल इसी रामाज्ञा के निम्न लिखित दोहों में किया है। अतएव विचार हेतु ऐसे कुछ दोहे यहां उद्धृत करना उचित प्रतीत होता हैः–

राम कुचरचा करहिं सब सीतहिं लाइ कलंक।
सदा अभागी लोग जग कहत सकोच न संक।
(६, ६, ४)

सती सिरोमनि सीय तजि राखि लोक रुचि राम।
सहे दुसह दुख सगुन गत प्रिय-वियोग परिनाम।
(६,६,५)

मानिय सिय अपराध बिनु प्रभु परिहर पछतात।
रुचे समाज न राज-सुख मन मलीन कृस गात।।
(६, ७, २)

राम-सभा लव कुस ललित, किये राम गुन गान।
राज समागम सगुन सुभ, सुजस लाभ सनमान।।
(६, ७, ४)

वाल्मीकि लव कुस सहित आनी सिय मुनि राम।
हृदय हरषु जानव प्रथम सगुन सोक परिनाम।
(६, ७, ५)

अनरथ असगुन अति असुभ सीता अवनि प्रवेश
समय सोक संताप भय कलह कलंक कलेस।
(६,७,५)

प्रथम दोहे में निरपराधिनी सीता जी के त्याग के कारण दुष्ट लोगों की दुष्प्रवृत्ति पर से एक सामान्य स्वरूप बतलाया है। उन अभागी कुपुरुषों का जिन्हें महत पुरुषों में दोषों की कल्पना कर उन्हें निन्दनीय ठहराने और अकारण आपत्ति में डालने वालों की इस संसार में सदा ही उपस्थिति रही है।

दूसरे दोहे में लोक–रुचि के रंजन करने की सती शिरोमणि सीता जी को त्यागने के परिणाम स्वरूप राम जी के दुसह दुःख सहने और सगुन–गत (मंगलहीन) होने की बात कही गई है। तृतीय श्री राम की विषम वेदना का वर्णन है, जो सीता–त्याग के कारण हुई है। अन्त में श्री राम द्वारा राज–सभा में सीता जी का पत्नी साम्राज्ञी रूप में गृहण करने में विचार के हेतु स्थगित होते ही अग्नि प्रवेश करना तुलसीदास जी ने स्पष्ट ही अनर्थ, अति अशुभ अशकुन घोर क्लेश पूर्ण कलंक घोषित किया है।

इसकी सं० १६५५ की स्वयं तुलसीदास जी की हस्त लिपि वाली प्रति का पता चलता है जिसका प्रथम उल्लेख 'रिपोर्ट फार दि सर्च आफ हिन्दी म्यूनिस्क्रिप्ट्स इन दि पंजाब (सन् १६२२, २४)' में है। पचास वर्ष पूर्व सर जार्ज ग्रियर्सन ने उसका अनुसंधान करके लिखा था कि मिरजापुर वाले लाला छक्कनलाल ने तुलसीदास जी की

संवत १६५५ की हस्त लिखित प्रति से की थी। ग्रियर्सन साहब ने छक्कनलाल की प्रतिलिपि की पुष्पिका उद्धृत की है जो यह है :–

"श्री संवत् १६५५ जेठ सुदी १० रविवार की लिखी पुस्तक श्री गोसाई जी के हस्त कमल की प्रहलाद घाट श्री काशी जी में रही। उस पुस्तक पर से श्री पंडित रामगुलाम जी के सत्संगी छक्कनलाल कायस्थ रामायणी मिरजापुर वासी ने अपने हाथ से संवत १८८४ मे लिखा था. "

(Indian Antiquary Vol- XXII 1893P-96)

उक्त पुष्पिका के साथ ही डॉ. ग्रियर्सन ने इस बात का भी उल्लेख किया है कि संवत १६२० वि० तक उक्त प्रति प्रहलाद घाट काशी में पंडित रामकृष्ण पुरोहित के पास थी, जो उनसे चोरी गई। षोडस–रामायण–संग्रह में संग्रहीत रामाज्ञा प्रश्न की पुष्पिका इस प्रकार है–

"हस्ताक्षर श्री गुसाई जी सवत १६५५ रविवार ज्येष्ठ शुक्ल १० "

यदि इसका पता चल जाता, तो इससे गोसाई जी की हस्तलिपि के निर्णय में बड़ी सहायता प्राप्त होती। कदाचित् तुलसीदास जी की हस्तलिपि सम्बन्धी प्रबल प्रमाण के उपस्थित होने पर तत्सम्बन्धी विवाद और मत विभिन्नता का सदा के लिए अन्त हो जाता !

समाचार पत्र पंजीयन (केन्द्रीय) कानून 1956 के अंतर्गत

'तुलसी मानस भारती'

के स्वामित्व तथा अन्य बातों के संबंध में विवरण

प्रकाशन का स्थान	:	भोपाल मध्यप्रदेश
प्रकाशन की अवधि	:	मासिक
मुद्रक का नाम	:	इति निगम
(क्या आप भारतीय हैं)	:	हाँ
पता	:	कृषिशोध प्रकाशन, 18–सी, नारायण नगर, होशंगाबाद रोड़, भोपाल
प्रकाशक का नाम	:	श्री रघुनंदन शर्मा
(क्या आप भारतीय हैं)	:	हाँ
संपादक का नाम	:	श्री प्रभुदयाल मिश्र
पता	:	तुलसी मानस प्रतिष्ठान, मानस भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल, मध्यप्रदेश –02
उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार हों	:	तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश मानस भवन, श्यामला हिल्स, भोपाल – 02 मध्यप्रदेश

रघुनंदन शर्मा एतद् द्वारा घोषित करता हूँ कि मेरी अधिकतम जानकारी एवं विश्वास के अनुसार ऊपर दिये गए विवरण सत्य हैं।

रघुनंदन शर्मा

प्रकाशक

आलेख

शकुंतला कालरा

श्री राम का तारा को ज्ञान और वैराग्य का उपदेश

सभी रामाख्यानकों में दो प्रकार के पात्रों का उल्लेख आता है। एक मानव पात्र और दूसरे मानवेतर पात्र जिसमें देव, दानव, गंधर्व, किन्नर, पशु–पक्षी आदि हैं। तारा वानर जाति के स्त्री पात्रों में प्रमुख पात्र है, जो मानवीय गुणों से संपन्न है। तारा बालि की ज्येष्ठा पत्नी और सुषेण की पुत्री है। मानस में तारा का व्यक्तित्त्व नीति–निपुण, बुद्धिमती, दूरदर्शी, वाक्पटु रामभक्त के रूपमें सुस्पष्ट और विकसित है। तारा का परिचय किष्किंधाकांड में होता है। जब राम के बाण से बालि आहत हो जाता है तब वह राम से अपना अपराध पूछता है कि उन्होंने किस कारण उसे 'ब्याध की नाईं' मारा है। दोनों में परस्पर संवाद होता है। राम उस पर विशेष कृपा करके उसे भक्ति का वरदान देकर उसे अपने धाम भेज देते हैं। वे शोक–संतप्त तारा को आत्मा की अमरता और शरीर की अविनश्वरता का उपदेश देकर उसे ज्ञान और भक्ति प्रदान करते हैं। रामचरित मानस में ऐसे अनेक स्थल हैं जिनमें किसी न किसी के द्वारा किसी व्यक्ति को किसी प्रकार का उपदेश दिया गया है। यह उपदेश या तो नीतिपरक हैं या अध्यात्मपरक। इन उपदेशों में कर्म सिद्धान्त, ब्रह्म, जीव, माया, सृष्टि, ज्ञान और वैराग्य आदि का विधिवत् निरूपण हुआ है। राम द्वारा अनेक पात्रों को समय–समय पर तद्विषयक उपदेश दिया गया है। राम द्वारा शबरी को दिया गया नवधा भक्ति का उपदेश अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इसी प्रकार बालि–वध के पश्चात् राम ने शोक, मोहाविष्ट तारा को ज्ञान और वैराग्य का उपदेश दिया। 'अध्यात्म रामायण' में भी राम ने इसी अवसर पर तारा को ज्ञान का उपदेश दिया है।1

राम के तीर से आहत बालि मरणासन्न स्थिति में है। राम ने उसे क्यों मारा? समदर्शी राम ने सुग्रीव को मित्र और बालि को अपना बैरी क्यों माना? छिपकर बाण क्यों चलाया? आदि–आदि अनेक शंकाएं लेकर बालि न्यायप्रिय राम से प्रश्न करता है –

धर्म हेतु अवतरेहु गोसाईं।
मारेहु मोहि ब्याध की नाईं।।

बालि राम से कहता है कि आप ही की तो घोषणा है – "सब मम प्रिय सब मम उपजाये।" बालि इस आधार पर राम को याद कराते हैं कि यहां आपने मेरे साथ न्याय नहीं किया। बालि का राम पर आक्षेप राम को कटघरे में ला खड़ा करता है। तुलसीदास ने अपने आदर्श नायक एवं लोकरक्षक राम को हर लोकापवाद से बचाने का प्रयास किया है। यहां राम स्वयं बालि के इस आक्षेप का उत्तर देते हैं कि तुमने स्वयं अधर्म किया है। धर्म की बातें तुम्हें शोभा नहीं देतीं। तुमने अधर्म किया है। तुमने अनुज–वधू और उसके पुत्र का हरण ही नहीं किया वरन् अब अनुज का वध भी करना चाहते हो। हे सठ सुनो, जो 'अनुज–वधू', भगिनी, सुतनारी और कन्या इन चार पर कुदृष्टि रखता है, वह घोर अधर्म करता है। उसे मृत्युदंड देना अधर्म नहीं है। तुमने महापाप किया है अनुज–पत्नी का बलात् हरण किया है। अतः मेरा तुम्हें ब्याध की भाँति मारना दंड किसी भी दृष्टि से अधर्म नहीं है। अधर्मी के लिए इस प्रकार का दंड धर्म ही माना जाएगा। अधर्मी को दूसरे से धर्म की आशा नहीं करनी चाहिए। यही नीति कहती है। मैंने तुम्हारे साथ कोई अन्याय नहीं किया। यही बात भगवद्गीता में भगवान श्रीकृष्ण ने भी दुर्योधन से उसके इसी प्रश्न का उत्तर देते हुए कही कि सठे साठ्यंम् समाचरेत् अर्थात् दुष्ट को दुष्टतापूर्वक मारना अनुचित नहीं है। उसके साथ वैसा ही आचरण करना चाहिए जैसा वह दूसरों के साथ करता है। राम की यहां सबसे बड़ी उदारता यह है कि वह उसे प्राणदान देकर उसकी हर शिकायत को दूर कर देना चाहते हैं किंतु बालि का राम के दर्शन–मात्र से ही सारा अज्ञान स्वतः नष्ट हो जाता है और वह अपने इस तर्क से राम को निरुत्तर कर देते हैं –

जन्म जन्म मुनि जतन कराहीं।
अंत राम कहि आवत नाहीं।।.....
मम लोचन गोचर सोइ आवा।
बहुरि कि प्रभु अस बनहि बनावा।।

राम उसकी अस्वीकृति पर प्रति तर्क नहीं करते। वह बालि को अपना प्रेय और श्रेय चुनने की खुली छूट देते हैं। राम चरणों में दृढ़ प्रीति का वरदान पाकर वह शरीर का त्याग करता है। राम उसे भक्ति का वरदान देते हुए अपने परमधाम में भेज देते हैं – "राम बालि निज धाम पठावा।"

बालि की मृत्यु का समाचार पाते ही तारा युद्धक्षेत्र में बेसुध सी दौड़ती हुई पति के पास आती है। उससे लिपटकर विलाप करती है। शोक की चरम सीमा पर उसके बाल छूट जाते हैं। उसे देह संभाल तक नहीं रहती। तारा का यह विलाप अत्यंत मर्मस्पर्शी है। मानस में तारा का विलाप अत्यंत हृदयविदारक है

नाना बिधि बिलाप कर तारा।
छूटे केस न देह सँभारा।।

उन्माद की स्थिति में वह मृत पति की देह से बातें करती है। तारा को विकल देखकर राम उसे आत्मज्ञान देते हैं –

तारा बिकल देखि रघुराया।
दीन्ह ग्यान हरि लीन्ही माया।।
छिति जल पावक गगन समीरा।
पंच रचित अति अधम सरीरा।।
प्रगट सो तनु तव आगें सोवा।

जीव नित्य केहि लगि तुम्ह रोवा।।

तारा रामभक्त है। राम के अप्रमेय रूप का उसे ज्ञान है।

यही कारण है कि मानस की तारा राम पर किसी प्रकार का आरोप नहीं लगाती। बालि को भी मानसकार ने रामभक्त दिखाया है। वह तारा को कहता है –

कह बाली सुनु भीरु प्रिय समदरसी रघुनाथ।
जौं कदाचि मोहि मारहिं तौ पुनि होउँ सनाथ।। 7

शोक–विकल तारा पर राम विशेष कृपा करते हैं। वह तारा को ज्ञान देते हैं। उसकी माया हर लेते हैं। यह राम की तारा पर विशेष 'कृपा' ही है। माया के स्थान पर ज्ञान जागृत होता है। 'वाल्मीकि रामायण' में शोक–संतप्त तारा बालि के साथ राम से अपने लिए भी उसी तीर से वध की प्रार्थना करती है किंतु मानसकार ने 'नाना बिध बिलाप कर तारा' कहकर इसमें हर प्रकार के विलाप को समाहित कर दिया है। जैसे रोते–रोते शव पर गिरना, देह की संभाल न रहना, मूर्च्छित हो जाना आदि–आदि। करुणानिधान राम ने न केवल बालि को निजधाम देकर उसका कल्याण किया, वरन् तारा को भी विषाद से मुक्त किया। गीता में अर्जुन जब विषाद–ग्रस्त होते हैं तो कृष्ण उसे ज्ञान देकर उसके मोह को नष्ट करते हैं। अज्ञान का कारण मोह है। कृष्ण के ज्ञानोपदेश के बाद अर्जुन का मोह नष्ट हो जाता है और वह कहता है–

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत।
स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव।।8

मोह के नष्ट होते ही 'स्मृतिर्लब्धा' कहता है अर्थात् जीव के मोह का कारण 'आत्मविस्मृति' है। जैसे ही आत्मस्वरूप का ज्ञान होता है जीव का सारा अज्ञान नष्ट हो जाता है। उसके सारे संशय दूर हो जाते हैं और बुद्धि स्थिर हो जाती है। यही अर्जुन के साथ हुआ और यही तारा के साथ। मोह ने दोनों के चित्त में प्रवेश कर उनकी स्मृति को ढंक लिया। दुःख का बीज मोह है। मोह में बुद्धि सम्मोहित हो जाती है। हम व्याकुल हो जाते हैं। तारा इसी मोह से आक्रांत हुई है। राम के द्वारा उसके मोह का निरसन होता है जैसे कृष्ण के माध्यम से अर्जुन का। ज्ञान उपदेश से दोनों के चित्त का परिष्कार होता है। राम ने कृपा करके जब तारा को ज्ञान का उपदेश दिया तो उसका अविद्याजन्य अज्ञान जाता रहा। अज्ञान का अर्थ है जो चीज जैसी है उसे उस रूप में न देखना। तारा पति की निर्जीव देह को चेतन समझ रही है। शरीर जड़ है, अचेतन है, स्थिर रहने वाला नहीं। वह मृतधर्मा है किंतु उसे सत्य समझकर तारा विलाप करती है। राम कहते हैं यह शरीर पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश इन पांच तत्त्वों से बना हुआ है। यह अत्यंत अधम है। इसमें जो ठोस तत्त्व है वह पृथ्वी है जिनसे अस्थि, चर्म, नाड़ी, रोम, मास का निर्माण होता है और जो शरीर में रक्तके रूप में है वह जल तत्त्व है। मूत्र, श्लेश्म, जल, शुक्र और स्वेद जल तत्त्व से जुड़े हुए हैं। इसमें जो उष्णता है व अग्नि तत्त्व के कारण है। भूख–प्यास, मोह और मैथुन का संबंध अग्नि से है। श्वास–प्रवास की प्रक्रिया वायु तत्त्व के कारण है। आकाश तत्त्व की तन्मात्रा शब्द अर्थात् ध्वनि के कारण इंद्रियां स्पर्श, रूप, रस, गंधादि का अनुभव करती हैं। मिट्टी अर्थात् पृथ्वी से बना होने के कारण यह शरीर अनित्य है। इस अनित्य शरीर के भीतर जो नित्य तत्त्व है वह 'जीव' अर्थात् आत्मा है। आत्मा चैतन्य और आनंद

स्वरूप है। तुम्हारे सम्मुख जो तन पृथ्वी पर निश्चेष्ट होकर सोया है, वह नश्वर है। यही इसकी प्रकृति है। शरीर प्रकट है पर आत्मा अप्रकट और नित्य है। चेतन, अमल और सुख की राशि है। तुम अनित्य शरीर के लिए व्यर्थ विलाप कर रही हो?

तारा के माध्यम से राम का संदेश है कि आत्मा अमर है। मृत्यु सिर्फ शरीर की होती है। गीता में भगवान कृष्ण का भी अर्जुन को यही संदेश है कि मरणधर्मा स्वजनों से मोह नहीं करना चाहिए। मृत्यु एक दिन आवश्यक है। बालि महान योद्धा और अप्रतिम वीर है किंतु अमरता का वरदान लेकर नहीं आया है। युद्ध में मृत्यु की संभावना तो रहेगी। 'जीव' तो नित्य है। शरीर के नष्ट होने से वह नष्ट नहीं होता। अतः तुम अनित्य वस्तु के लिए शोक मत करो। राम के इन शब्दों से तारा के मन में ज्ञान उपजते ही उसका मोह–जनित अज्ञान जाता रहा। जैसे प्रकाश के होते ही अंधकार का स्वतः नाश हो जाता है, वैसे तारा का अज्ञानांधकार स्वतः नष्ट हो गया। भक्त हृदया तारा के चरित्र की प्रमुख विशेषता है उसका कृतज्ञ भाव। इसी से प्रेरित वह प्रभु राम के चरणों में सिर नवाकर उनसे सबसे दुर्लभ वस्तु उनकी भक्ति का वर मांग लेती है–

उपजा ग्यान चरन तब लागी।
लीन्हेसि परम भगति बर मागी।।9

चरणों की वंदना करने का भाव है तारा का राम के प्रति कृतकृत्य अनुभव करना। तुलसी के हर पात्र ने सदा राम से उनके चरण–कमलों में अनुराग की, दास्य भक्ति की कामना की है। वह जानते हैं सबसे दुर्लभ वस्तु भक्ति है। भक्ति के उपजते ही मोह जनित सारे विकार स्वतः नष्ट हो जाते हैं। वैसे भी जब यह ज्ञान हो जाता है कि संसार मिथ्या है। अनित्य है। इसके सब व्यापार नश्वर हैं तो कबीर की भांति हर ज्ञानी की "क्या मांगू कुछ थिर नाहिं" की मनस्थिति हो जाती है। अपने बुद्धि–चातुर्य से तारा परम भक्ति का वर मांग लेती है क्योंकि जप–तप–योग आदि सबका फल भक्ति ही है। शिव पार्वती से कहते हैं 'सब कर फल हरि भगति भवानी।' इस तरह मोह–ग्रस्त तारा राम से भक्ति का वरदान पाकर कृतकृत्य हो गई। शिव भवानी से कहते हैं कि सबकी मति को चलाने वाले इन्द्रियों के नियंता ईश्वर हैं। सब कुछ उनकी प्रेरणा से होता है। संसार एक रंगमंच है। ईश्वर सूत्रधार है। जीव कठपुतलियों की भाँति नाचता है

उमा दारु जोषित की नाईं।
सबहिं नचावत रामु गोसाईं।10

गीता में भी भगवान कृष्ण अर्जुन से यही कहते हैं। बालि, जब राम के सम्मुख समर्पण कर देता है तो राम न केवल उस पर कृपा करते हैं वरन् उसके परिवार को भी उनका मनवांछित प्रदान करते हैं। बालि व तारा को भक्ति का वरदान प्राप्त होता है और अंगद को युवराज का पद। समदर्शी राम ने तीनों के साथ न्याय किया। उन्हें उनका अभीष्ट प्रदान कर वे बालि के इस उपालम्भ को भी दूर कर देते हैं कि वे समदर्शी नहीं हैं।

प्रस्तुत प्रकरण इस बात का प्रमाण है कि जो ईश्वर के परायण हैं उनका उद्धार निश्चित है। राम बालि को निजधाम ही नहीं भेजते उसे हर जन्म में अचल भक्ति का वरदान भी देते हैं। वह परम शांति और आनंद को प्राप्त कर राम के परमधाम का अधिकारी बन जाता है। परमधाम अर्थात् ऐसी अध्यात्मिक अवस्था को प्राप्त कर

लेना जिसके उपरान्त जन्म–मरण का चक्कर ही समाप्त हो जाता है। तारा को तत्वज्ञान का उपदेश देकर राम उसे मोह और भोग से मुक्त करते हैं। भगवान राम का दोनों को दिया गया यह उपदेश हर जीव के लिए दीक्षा है जो उसे मोह–शोक से उबारता है।

राम–तारा–संवाद में में तारा की जो उपर्युक्त चारित्रिक रेखाएँ स्पष्ट हुईं हैं इनके अतिरिक्त भी मानस में तारा के व्यक्तित्त्व में अन्य गुणों का विकास भी परिलक्षित होता है। वह पति को बहुत प्यार करती है। पति के हित का ध्यान रखती है। बालि जिस समय सुग्रीव से लड़ने के लिए क्रोध में भरकर वेग से दौड़ता है उस समय तारा उसे समझाती है कि अब आप सुग्रीव के बल को कम मत आंको क्योंकि अब वह अकेला नहीं। सुग्रीव को राम का साथ प्राप्त है। उसे दो–दो बड़े बलशाली योद्धाओं का साथ प्राप्त है, जिन्हें संग्राम में स्वयं काल भी नहीं जीत सकता –

सुनु पति जिन्हहि मिलेउ सुग्रीवा।
ते द्वौ बंधु तेज बल सींवा।।
कोसलेस सुत लछिमन रामा।
कालहु जीति सकहिं संग्रामा।।11

नीति–निपुण तारा पति की अनीतियों का विरोध करती है, किंतु अभिमानी बालि उसकी हितैषी सीख को नहीं मानता। इस बात की शिकायत बालि से स्वयं राम करते हैं–

मूढ़ तोहि अतिसय अभिमाना।
नारि सिखावन करसि न काना।।
मम भुज बल आश्रित तेहि जानी।
मारा चहसि अधम अभिमानी।।12

तारा अत्यंत बुद्धिमती है। वह परिस्थितियों के अनुसार स्वयं को बदलना जानती है। इसी कारण वह सुग्रीव की अधीनता स्वीकार कर लेती है। इतना ही नहीं जब सुग्रीव राज्य, नगर, खजाना और स्त्री को पाकर सीता–खोज जैसे महत्त्वपूर्ण कार्य को भूलने लगते हैं, तब राम अत्यंत क्रोधित होते हैं और लक्ष्मण को कहते हैं कि सुग्रीव को भय दिखाकर ले आओ। क्रुद्ध लक्ष्मण के धनुष की टंकार सुनकर सुग्रीव भयभीत हो जाते हैं और हनुमान से कहते हैं कि तुम तारा को साथ लेकर लक्ष्मण को शांत करो। इससे स्पष्ट है कि तारा बुद्धिमती है और उसका स्थान सुग्रीव के शासन काल में भी पूर्ववत् है। वह मनोविज्ञान–पारखी है। मौके की नज़ाकत को समझते हुए विन्रमता पूर्वक लक्ष्मण के चरणों में वंदन कर उनके उग्र रोष से तारा कर्त्तव्य–भ्रष्ट सुग्रीव को बचाती है। तारा वाक्पटु है। अपनी मधुर एवं चातुर्यपूर्ण वाणी से उन्हें शान्त करती है –

क्रोधवंत लछिमन सुनि काना।
कह कपीस अति भयँ अकुलाना।।
सुनु हनुमंत संग ले तारा।
करि बिनती समुझाउ कुमारा।।
तारा सहित जाइ हनुमाना।
चरन बंदि प्रभु सुजसु बखाना।।13

वह बालि की ज्येष्ठ पत्नी ही नहीं उसकी प्रिय पत्नी है व राजरानी है। वह पति की इतनी प्रिया है कि आनंद रामायणकार लिखते हैं कि बालि युद्ध में जाने से पूर्व ही अपनी प्रिय पत्नी तारा को अपनी भावी मृत्यु के विषय में बतलाकर उसे सुग्रीव के साथ आनंदमय जीवन व्यतीत करने को कहता है। मानसकार ने इस प्रसंग का कहीं उल्लेख नहीं किया। अलग–अलग काव्यों में तारा की घटनात्मक स्थिति अलग–अलग है। 'वाल्मीकि रामायण' के उदीच्य पाठ, 'गौणीय रामायण' के

किष्किंधाकांड में तारा राम को शाप देती है कि सीता के साथ तुम्हारा संयोग बहुत कम समय के लिए होगा। वह पृथ्वी में समा जाएगी। आजीवन तुम्हें वियोग सहना होगा।15 इसी प्रकार 'रामायण मंजरी' में भी इस शाप का वर्णन मिलता है।16

समग्रतः कहा जा सकता कि पति की मृत्यु के शोक में डूबी मोहाविष्ट तारा को निमित्त बनाकर दिया गया राम का ज्ञान और वैराग्य का उपदेश हर मोह और शोकग्रस्त जीव के लिए है।

पाठकीय प्रतिक्रिया

श्री हरप्रसाद शर्मा, पंडित जी का रायपुर से दूरभाष प्राप्त हुआ । उन्होंने तुलसी मानस भारती के माह जनवरी 2026 के विशेषांक के संबंध में अपनी विस्तृत टिप्पणियां प्रकट की। उन्होंने कहा कि वे स्वास्थ्य कारणों से स्वयं लिखने में समर्थ नहीं है इसलिए यह चाहते हैं कि उनके विचारों को अभिलेखबद्ध करके यदि उनकी पाठकीय प्रतिक्रिया पत्रिका मेँ प्रकाशित की जाती है तो उन्हें प्रसन्नता होगी ।

पंडित जी ने सबसे पहले गोस्वामी तुलसीदास जी की जीवनी परक श्री लोकनाथ द्विवेदी, सिलाहकारी के कार्य की सराहना करते हुए बताया कि उन्होंने सागर विश्वविद्यालय में श्री द्विवेदी जी के हिंदी विभाग में निरंतर दर्शन किए हैं। वे उन्हें नमस्कार करते हुए अध्ययन के लिए वहाँ पहुंचते थे। श्री सिलहकारी जी कृष काया के गंभीर कोटि के व्यक्ति थे। उस समय वे यह नहीं जान सके कि उनकी गंभीरता और एकाग्रता इतने गहन कार्य में संलग्न है ।

गोस्वामी तुलसीदास जी की प्रमाणिक जीवनी को समर्पित तुलसी मानस भारती का यह विशेषांक सर्वथा अनुपम है। उन्होंने इस विशेष अंक को आदि से अंत तक समग्रता से पढ़ा है और उसके पश्चात ही वे दूरभाष पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए बहुत संतोष का अनुभव कर रहे हैं।

श्री शर्मा जी का कहना था कि यह एक आश्चर्य ही है कि गोस्वामी तुलसीदास जी की जीवनी के संबंध में इतने शोध के बाद भी जैसे काफी रिक्तता अभी भी शेष है। इसकी पूर्ति की दिशा में तुलसी मानस भारती जो कार्य कर रही है वह सर्वथा प्रशंसा योग्य और सराहनीय है ।अन्य लेखों के संबंध में भी श्री शर्मा जी ने अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए श्री रघुनन्दन जी, श्री रावत जी, राजरानी शर्मा आदि के लेखों और उसकी सामग्री पर अपनी प्रसन्नता व्यक्त की तथा सभी के संबंध में उनकी टिप्पणियां अनुकूल थी ।

पंडित हरिप्रसाद शर्मा, रायपुर

आलेख

डॉ. संगीता चौहान

भारतीय संस्कृति की वर्तमान प्रासंगिकता : रामकथा के परिप्रेक्ष्य में

तत्कर्म यन्न बन्धाय सा विद्या या विमुक्तये।
आयासाया परं कर्म विद्याऽन्या शिल्पनैपुणम्।।

श्री विष्णुपुराणम्

उपर्युक्त श्लोक का अर्थ यह है कि जो कर्म हमें न बाँधे वही (वास्तव में) कर्म है। जो ज्ञान मुक्ति के लिए हो, वही (वास्तव में) ज्ञान है। बाकी सारे कर्म श्रम मात्र हैं। बाकी सारी विद्या केवल कुशलता मात्र है।

संसार में उसी व्यक्ति का जीवन सार्थक सिद्ध होता है, जिनमें व्यवहार, ज्ञान एवं विवेक का समन्वय एवं समतुल्यता होती है। मनुष्य के सामाजिक, व्यवहार संस्कृति के द्वारा परिचालित होते हैं। समाज के बीच स्थित आदर्श विचारों के द्वारा ही संस्कृति अपनी पहचान लोगों को कराती है। अगर जीवन का विकास सही अर्थों में करना है तो संस्कृति का अनुसरण एवं उसको आत्मसात् करना अनिवार्य माना जाता है। दूसरे शब्दों में– "संस्कृति जीवन के प्रति हमारा दृष्टिकोण है। राष्ट्रनिर्माण हेतु सामाजिक, साहित्यिक, राजनीतिक, नैतिक, आर्थिक, आध्यात्मिक एवं कलात्मक तत्वों की सबसे ज्यादा आवश्यकता होती है, उन्हीं विचारों और कार्यकलापों को संस्कृति के अंतर्गत गिना जाता है। संस्कृति व्यक्तिनिष्ठ न होकर अनेक व्यक्तियों द्वारा किया गया एक बौद्धिक अनुष्ठान है। संस्कृति किसी देश के नागरिकों का शताब्दियों से किया गया कार्य परिणाम है, जो राष्ट्र निर्माण में हमेशा काम आता है।"1"

'राष्ट्र के निर्माण में सहायक संस्कृति' के रूप में भारतीय संस्कृति की पहचान हमेशा से रही है। भारतीय संस्कृति प्रत्येक भारतीय नागरिक की आत्मा है। संस्कृति के दो सबसे महत्वपूर्ण स्तंभ 'धर्म' और 'दर्शन' हैं, जिन्हें एक–दूसरे से पृथक करना नामुमकिन प्रतीत होता है। संस्कृति व्यक्ति के जीवन की परछाई है, जिसे व्यक्ति

चाहे तो भी अपने से दूर नहीं कर सकता। जिस प्रकार पानी में नमक मिलाने पर नमक दिखता तो नहीं है लेकिन नमकीन स्वाद के द्वारा वह अपनी उपस्थिति दर्ज कराता है उसी प्रकार भारतीय संस्कृति दिखती नहीं है क्योंकि वह प्रत्येक भारतीय नागरिक के स्वभाव में घुल–मिल जाती है और उसके विवेकपूर्ण आचरण, उसके ज्ञान के द्वारा हमारे समक्ष प्रस्तुत होती है। भारतीय संस्कृति की पहचान हमें इन विचारों के माध्यम से सटीक रूप में हो जाएगी–"भारतीय संस्कृति के बारे में यही कहा जाता है कि यह राष्ट्र के उन व्यक्तियों द्वारा प्रस्तुत किया गया ऐसा व्यवहार है जो व्यक्तियों का आदर्श है, उनके द्वारा अनुकरणीय है और उन्हें सही अर्थों में सामाजिक बनानेवाला तत्व है। यही सामाजिकता राष्ट्रीय निर्माण हेतु मजबूत आधारशिला बनती है।"2

भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्व इस प्रकार हैं–

प्राचीनता एवं दीर्घजीविता :

इससे आशय है कि संस्कृति पुरानी होती है यानि लंबे समय से वह समाज में आचरित होती रही है। तथा लंबे समय तक वह जीवित रहती है। उदाहरण के लिए वेद मंत्रादि का वर्तमान में अस्तित्व, सत्य और अहिंसा का पालन, राम–कृष्ण की महिमा का गान, सीता–द्रोपदी जैसी नारियों का सम्मान आदि।

आध्यामिकता :

भारतीय संस्कृति का महत्वपूर्ण लक्ष्य आत्मा का परमात्मा से साक्षात्कार कराना है। भारतीय संस्कृति का आत्मा की अमरता में विश्वास ही हर भारतीय को निराशावाद से कोसों दूर रखता है।

यम-नियमों का पालन :

सत्य, अहिंसा, अस्तेय, अपरिग्रह तथा ब्रह्मचर्य– ये पांच यम अगर व्यक्ति द्वारा आचरण में लाये जाते हैं तो वे भारतीय संस्कृति के ही परिचायक हैं। इन्हीं नियमों के पालन से व्यक्ति दानव न बनकर मानव बना रहता है।

पुरुषार्थ चतुष्टय :

जिन चार पुरुषार्थ की सिद्धि मानव जीवन की सार्थकता में आवश्यक है, वे हैः धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष।

षोडश संस्कार बालक के गर्भ में आने से लेकर उसकी मृत्यु तक उसे सोलह संस्कारों से गुजरना पड़ता है। यही संस्कार व्यक्ति को मानसिक और शारीरिक रूप से स्वस्थ रखते हैं। संस्कारवान व्यक्ति ही राष्ट्र निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

महान व्यक्तियों के प्रति श्रद्धा :

गुरु को देवता मानना, राष्ट्र की महान विभूतियों का आदर करना तथा देशभक्तों एवं शहीदों की गाथा भारतीय संस्कृति का ही एक अंग है।

विश्व कल्याण की कामना :

भारतीय संस्कृति "वसुधैव कुटुंबकम्" की भावना से ओत–प्रोत है। प्रत्येक भारतीय के मन में मनुष्य के साथ–साथ पशु–पक्षी–प्रकृति आदि के प्रति लगाव की भावना संस्कृति के माध्यम से ही आती है।

समन्वय भावना :

विविधता में एकता भारत को विश्व की अन्य संस्कृतियों से अलग करती है। यही भावना हर नागरिक को एकसूत्रता में बाँधे रखने की ताकत रखती है।

निष्काम कर्म योग :

यह तत्व केवल भारतीय संस्कृति के तहत ही परिलक्षित होता है। यानि कि फल की आशा किये बिना निःस्वार्थ भाव से कर्म करते रहने की प्रेरणा भारत के लोगों को संस्कृति के जरिये ही प्राप्त हुई है।

त्याग भावना :

कभी भी किसी व्यक्ति या वस्तु के प्रति अधिक आसक्ति नहीं रखनी चाहिए। क्योंकि सब कुछ ईश्वर द्वारा नियंत्रित है और उसी का है– यह भावना भारतीय संस्कृति की महत्वपूर्ण पहचान है।

जननी और जन्मभूमि :

जन्म के बाद प्रत्येक व्यक्ति को मां एवं मातृभूमि रूपी दो गोद प्राप्त होती है, जिसमें वह सुरक्षित रूप से पलता–बढ़ता है। इसलिए दोनों का आदर करना भारतीय संस्कृति के तहत बताया गया है। इसलिए कहा गया है कि–

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपिगरीयसी।"

भारत में सदियों से प्रचलित देवी–देवताओं की कथाएँ भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग बनकर भारतीय संस्कारों को पोषित करती रही हैं। उसमें से रामकथा भारतीय संस्कृति में इतनी रच–बस गई है कि भारतीय लोग मुसीबत के समय में तो राम–नाम का स्मरण करते ही हैं साथ ही वही राम–नाम व्यक्ति की अंतिम यात्रा में भी लगातार रटा जाता है। रामकथा हर भारतीय के कष्ट का आधार बनकर प्रत्येक क्षण उसकी आत्मा को सच्ची राह दिखाती है। रामकथा को विविध 1 संदर्भों में प्रस्तुत करनेवाले विद्वान डॉ. क्षमाशंकर पाण्डेय के मतानुसार – "रामकथा अपने पूरे रचाव में भारतीय समाज में प्रेरणा का स्रोत रही है। पारिवारिक आदर्श, सामाजिक आदर्श, राजनैतिक आदर्श और समष्टिगत आदर्श सब अनायास इसमें उपलब्ध हो जाते हैं। संस्कृत में आदर्श का अर्थ दर्पण होता है। दर्पण जिसमें अपना स्वरूप निहारते हुए उसका सुधार और परिष्कार हम विभिन्न संसाधनों द्वारा करते हैं। रामकथा हमें हमारे रूप की पहचान तो कराती है, उसके सुधार, परिष्कार और संस्कार के लिए भी प्रेरित करती है। व्यक्ति को संस्कारवान बनाते हुए समाज को संस्कारित करने की परियोजना का अहम् अंग है रामकथा।"3

रामकथा का सबसे बड़ा लक्ष्य है– लोकमंगल। यह लोकमंगल की भावना ही इंसान में इंसानियत जगाती है। व्यक्ति जो कुछ भी ज्ञान प्राप्त करता है उसका उपयोग उसे अपने अंदर के देवता को जगाने में करना है या अपने अंदर के असुर को जगाने में यह उस व्यक्ति पर निर्भर है। आज के समय में प्रत्येक व्यक्ति के सामने आने वाला सबसे बड़ा संकट अपने अंदर मर रही इंसानियत को बनाये रखने का है और इस कार्य में उसकी सहायता रामकथा ही कर सकती है। क्योंकि "संबंध, व्यवस्था, संघर्ष, सुख–दुःख, विधि –निषेध के विविध रंगों में रंजित यह कथा हमारे आज के संकट को दूर करने के तमाम उपयोगी सूत्र हमें देती है। यह वचन की कीमत करना सिखाती है, यह बुराइयों और अन्याय के खिलाफ संघर्ष का मंत्र देती है। यह भौतिक उपलब्धियों की व्यर्थता और मानवीय तथा आत्मिक उपलब्धियों की मूल्यवान का महत्व प्रतिपादित करती है।"4

महर्षि वाल्मीकि कृत 'रामायण' और गोस्वामी तुलसीदास रचित 'रामचरितमानस' की रामकथा द्वारा विश्व के किसी भी संकट का सुमाधान प्राप्त

किया जा सकता है। आज जब सारा विश्व आतंक और हिंसा के अदृश्य भय से काँप रहा है तब उसका चित्त स्थिर करने के उपाय 'रामायण' और 'रामचरितमानस' के पठन पर निर्भर करता है। क्योंकि मनुष्य बचे, मनुष्यता बचे यही उद्देश्य रामकथा में मिलता है। यथा–"रामचरितमानस, जिसके बारे में यह उक्ति है कि इसमें से सबको अपनी–अपनी रुचि और दृष्टि के अनुसार पोष्य प्राप्त होता है, समकालीन परिवेश में व्याप्त हिंसा और आतंकवाद के विरुद्ध संघर्ष में हमारे लिए प्रेरणास्रोत है। आवश्यकता है अपने बीच में बढ़ती यंत्रों की भूमिका के बीच हम मनुष्य को बचाने का संघर्ष करें, क्योंकि यदि मानव बचेगा, मानवता बचेगी, रिश्ते बचेंगे तो बचेगी स्नेह और प्रेम की संस्कृति। हिंसा को अपनी संस्कृति का उत्पादन न बनाकर, मात्र वक्त–जरूरत काम आनेवाली दवा के रूप में ही प्रयोग करें तो संभव है भविष्य में मानवता की राह सुरक्षित होगी।"5

वस्तुतः रामकथा एवं भारतीय संस्कृति एक ही सिक्के के दो पहलू हैं, जिन्हें कभी भी पृथक् पृथक् रूप में नहीं देखा जा सकता। भारतीय संस्कृति के सभी मूलभूत तत्त्व रामकथा में पाए जाते हैं। भारतीय समाज हमेशा से रामकथा को प्रेरणादायी आधार मानता था, मानता है और मानता रहेगा। इसमें कोई दो राय संशय नहीं है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि वर्तमान कलयुग के भयावह अंधकार को दूर करने का प्रकाश रूपी कोई माध्यम है, तो वह रामकथा ही है। यह रामकथा भारतीय संस्कृति ही नहीं, बल्कि भारतीय ज्ञान परंपरा का भी आधार स्तंभ है। मनुष्य मात्र की भावना–संवेदना, यह धरती–अंबर, यह प्रकृति–पर्यावरण तथा यह पूरा संसार इस रामकथा से प्रेरणा लेकर ही सुरक्षित रह पाएगा। ऐसा कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

नलिनी अरविंद एंड टी.वी.पटेल आर्ट्स कॉलेज, जिला आणंद, गुजरात
मो. 76982 09813

संदर्भ

१. भारतीय ज्ञान परंपरा : अनुप्रयोग एवं सिद्धांत, संपादक– रिन्जु राय, अनुपम कुमार राय, पृ.४६
२. वही, पृ.५१
३. रामकथा : विविध संदर्भ, क्षमाशंकर पाण्डेय, पृ.०६
४. वही, पृ.३०
५. वही, पृ.६६

आलेख

प्रेम नारायण गुप्ता

गोस्वामी तुलसीदास की अवधी भाषा प्रकृति

हिन्दी साहित्य जगत के कतिपय विद्वान् तुलसी जन्मभूमि के रूप में अवध क्षेत्रिय यमुना तटवर्ती राजापुर जनपद बाँदा (वर्तमान चित्रकूट को अवधी होने की संज्ञा देते हैं। इस अवधारणा के परिप्रेक्ष्य में वे तुलसीदास जी कृत काव्य ग्रन्थों की प्रतिनिधि रचना श्री रामचरितमानस की भाषा को अवधी होने की संज्ञा देते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में यह प्रश्न उपस्थित है–

प्रश्न– क्या तुलसी भाषा अथवा रामचरितमानस की भाषा में अवधी की स्वररूपगत प्रमुख विशेषताओं अर्थात् अवधी की धरती से उद्भूत भाषात्मक प्रवृत्तियों का समाहार हुआ है? यथा–

अवधी की स्वरूपगत प्रमुख विशेषताएँ –

(क) 'ए' ध्वनि शब्द के आद्याक्षर में परावृत्त होकर 'या' रूप में संयोजित होती। तथा आद्याक्षर अर्द्ध होकर शब्द को संयुक्ताक्षर रूप प्रदान कर व्यवहृत होत है यथा देर–दयार, मेला–म्याला, खेत–ख्यात, आदि।

(अ) 'ऐ' की ध्वनि 'अइ' में परावृत्त होकर शब्द के आद्याक्षर का स्थान ग्रहण कर व्यवहृत होती है, यथा– पैसा–पइसा, कैसा–कइसा, ऐसा–अइसा आदि

(ग) 'ओ' ध्वनि का परावृत्त रूप 'वा' होकर शब्द के आद्याक्षर को अर्द्धरूप प्रदान कर शब्द को संयुक्त रूप में व्यवहृत करता है, यथा– चोर–च्वार, जोतता–ज्वातत, बोला–ब्वाला, सोचे–स्वाचे आदि।

(घ) 'औ' की ध्वनि आद्याक्षर में परावृत्त होकर 'अउ' रूप में व्यवहृत होती है, यथा और–अउर, कौर –कउर, कौन–कउन आदि।

(ङ) अपूर्ण कृदन्त के एकवचनीय पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग रूप अकारान्त तथा इकारान्त होकर व्यवहृत होते हैं, यथा चलत–चलति, आवत–आवति, गावत–गावति आदि।

(च) वर्तमान अर्थात तीनों कालों के क्रिया रूप इकारान्त होकर व्यवहृत होते हैं–

यथा सुनि, देखि, जागि, भागि आदि।

(छ) आकारान्त शब्द अवधी में लघ्वन्त होकर व्यवहृत होते हैं, यथा गोरा–गोर, काला–कार, घोड़ा–घोर तथा साँवला–साँवर आदि।

(ज) उकारान्तता का रूप व्यंजनान्त प्रतिपादकों में कर्ता–कर्म की विभक्ति का काम करता है परन्तु व्यक्तिवाचक संज्ञा एवं विशेषण तथा अपूर्ण कृदन्तों में उकारान्त का प्रयोग नहीं होता है।

(झ) सहायक क्रिया 'है' और 'हैं' के रूप अवधी में 'हइ' और 'हइँ' के रूप में प्रयुक्त होती है। मानस में 'हइ' का प्रयोग मात्र दो स्थान पर है तथा 'हइँ' का प्रयोग मानस में पन्द्रह स्थान पर हुआ है।

लिपि प्रवृत्ति :

१. संस्कृत का मूर्द्धन्य 'षकार' का ध्वनि उच्चारण तथा आलेखन 'खकार' के आलेख्य का रूप ग्रहण कर व्यवहृत होता है– यथा– दोष – दोख, भाषा – भाखा, मानुष – मानुख, अभिलाषा – अभिलाखा, पुरुष – पुरुख आदि।

२. संस्कृत शब्दों का 'वकार' व्यंजन आदि एवं मध्य में ध्वनि उच्चारण एवं आलेखन में 'बकार' की ध्वनि तथा आलेख्य को ग्रहण कर व्यवहृत होता है, यथा वेद–बेद, विवेक–बिबेक आदि।

मानसकार गोस्वामी तुलसीदास जी ने क्या उपर्युक्त प्रकार वर्णित अवधी की स्वरूपगत प्रमुख विशेषताओं का अपनी भक्ति काव्य रचनाओं में कोई स्थान दिया है? उक्त के प्रश्नोत्तर परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत लेखक ने अपने स्वकृत शोध निबन्ध में अवधी की उक्त वर्णित स्वरूपगत प्रमुख विशेषताओं से रामचरितमानस के भाषा स्वरूप का तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करते हुए यह प्रतिपादित करने का विनम्र प्रयास हैकि तुलसीदास जी की जन्मभूमि अवधक्षेत्र में नहीं है और न रामचरितमानस की भाषा को अवधी कहा जा सकता है। इस प्रकार के कथन से प्रस्तुत लेखक का यह अभिप्राय कदापि नहीं कि रामचरितमानस में अवधी की स्वरूपगत प्रमुख विशेषताओं का प्रयोग नहीं हुआ है। उक्त प्रवृत्तियों के अतिरिक्त कतिपय अवधी प्रवृत्तियाँ मानस में व्यवहृत हैं, यथा–

संज्ञार्थक क्रिया–प्रयोग : यह क्रिया शब्द में "ब" के संयोजन रूप में व्यवहृत होती है। इसमें लिंग भेद नहीं होता । इसका प्रयोग भविष्यत्काल विशेष के प्रति ही होता है। यथा आउब–आऊंगी या आऊंगा, करब–करूँगा या करूंगी देखब–देखूँगा आऊँगा–आऊँगी इसका प्रयोग मानस में अल्परूप में हुआ है।

भूतकाल क्रिया :

'किया' तथा 'दिया' का रूप मानस में 'कीन्ह' तथा 'दीन्ह' रूप में अवधी की प्रवृत्ति हैं, यह सामान्य भाषात्मक प्रवृत्ति है।

तुलसीदास जी ने मानस में क्रिया के वे रूप जो स्वराक्षर (मात्राओं से होकर लिंग एवं काल भेद की पृथकता को दर्शाते हैं, ऐसे प्रयोग अवधी के नहीं। इन्हें यथा स्थान प्रदर्शित किया गया है।

शब्द बाहुल्य

हिन्दी साहित्य जगत के कतिपय अवध क्षेत्रिय विद्वानों द्वारा मानस में अवधी शब्दावली का उल्लेख किया है। अवधी शब्दों के बाहुल्य के और तुलसीदास जी को अवध क्षेत्र में जन्मा तथा उनकी भाषा को अवधी होने की कल्पना की है। इस सम्बन्ध में पं. रामचन्द्र शुक्ल ने अपने ग्रन्थ 'हिन्दी साहित्य इतिहास' (३८वां संस्करण) के ७१वें पृष्ठ पर इस प्रकार उल्लेख किया है–

जिन्हें भाषा की परख है उन्हें यह देखते देर न लगेगा कि तुलसीदास की भाषा में ऐसे शब्द जो स्थान विशेष के बाहर नहीं बोले जाते हैं, केवल

दो स्थानों के चित्रकूट के आस–पास के और अयोध्या के आस–पास के। किसी कवि की रचना यदि किसी स्थान विशेष के भीतर ही बोले जाने बाले शब्द मिलें तो उस स्थान विशेष से कवि का निवास सम्बन्ध मानना चाहिए। इस दृष्टि से देखने पर यह बात मन में बैठ जाती है कि तुलसीदास जी का जन्म राजापुर में हुआ जहाँ उनकी कुमार अवस्था बीती।

आचार्य पंडित रामचन्द्र शुक्ल की यह मान्यता प्रतिपादित करना कि 'यदि किसी स्थान विशेष के भीतर ही बोले जाने बाले शब्द मिलें तो उस स्थान विशेष कवि का निवास सम्बन्ध मानना चाहिए' अर्थात् वह स्थान कवि की जन्मभूमि हो सकती है। इस सम्बन्ध में उन्होंने चित्रकूट और अयोध्या के आस–पास में व्यवहृत होने वाली शब्दावली तुलसी भाषा में होने का संकेत कर अवध क्षेत्रिय राजापुर को तुलसी की जन्मभूमि होने का उल्लेख किया है। मात्र शब्द बाहुल्य के आधार पर यह निष्कर्ष न तो समीचीन है और न अनुष्ठेय ही है। क्योंकि तुलसीदास जी कृत वैराग्य संदीपनी, गीतावली, कवितावली, दोहावली, श्रीकृष्ण गीतावली एवं विनयपत्रिका ग्रन्थों में पश्चिमी हिन्दी प्रदेश की शब्दावली का बाहुल्य है तो पश्चिमी हिन्दी क्षेत्र उनका जन्म स्थान क्यों नहीं हो सकता?

किसी स्थान विशेष (भाषायी क्षेत्र) की शब्दावली का गिरा–ग्राम्य रूप किसी भी व्यक्ति विशेष को तब ही हृदयंगम होकर उसके कथोपकथन अथवा आलेखन में दृष्टिगोचर होता है जब वह व्यक्ति या तो उस भाषायी क्षेत्र में जन्मा हो अथवा किसी अन्य भाषायी क्षेत्र विशेष से आकर उसका दीर्घकालीन निवास स्थायी रूप से उस भाषायी क्षेत्र विशेष में बस गया हो ।

वाह्य साक्ष्य अर्थात तुलसी जीवनवृत्त सोरों सामग्री के आधार स्वरूप तुलसीदास जी का जन्म सोरों सुकरक्षेत्र में संवत् १५६८ वि. को हुआ था। सोरों सामग्री के उल्लेखानुसार तुलसीदास के प्रारम्भिक छत्तीस वर्षीय दीर्घकालावधि अपने आध्यात्म गुरु नृसिंह के सान्निध्य एवं गृहस्थ जीवन के रूप में सोरों सूकरक्षेत्र में ही व्यतीत हुई। संवत १६०४ वि. में उन्होंने अपनी पत्नी द्वारा रहस्यमयी शब्दों से प्रेरित होकर गृहस्थ जीवन का परित्याग कर सदा सर्वदा के लिए अपनी जन्मभूमि का को त्याग कर वैराग्य धारण कर लिया। तदोपरान्त अपने इष्टदेव श्रीराम जी की जन्मभूमि क्षेत्र अवध में अपने शेष जीवन काल में रामाराथना कर संवत् १६८० वि. को काशी में सुरसरि तट से स्वर्गप्रयाण कर अमरत्व की अमूल्य संपदा को प्राप्त किया।

उक्त समीक्षात्मक अध्ययन के आधार पर तुलसीदास जी ने अपने जीवन के ७६ वर्ष अवध एवं उसके प्रतिवासी क्षेत्रों में ही व्यतीत किये थे। इसी कारण अवध क्षेत्रिय विशेष जनसामान्य के सम्पर्क से उनके कथोपकथन एवं संलाप में उच्चारित शब्द उनके घरू में शब्द बन गये जिन्हें उन्होंने प्रसंग अनुरूप अपने काव्य ग्रन्थों में यथा स्थान व्यवहृत किया। परन्तु लिंग एवं काल भेद की भाषात्मक प्रवृत्तियाँ तथा लिपि प्रवृत्तियों का भाषा स्यापन अवधी की स्वरूपगत प्रमुख विशेषताओं के अनुरूप न होकर पश्चिमी हिंदी भाषायी क्षेत्र की प्रवृत्तियों का प्रतिनिधित्व करते हुए समस्त तुलसीदास जी कृत हैं अन्यों के भाषा स्वरूप में समान रूप से यथावत् हुआ है।

श्री प्रेमनारायण गुप्त की "तुलसी जन्मभूमि"
तुलसी साहित्य मंडल ऐटा से प्रकाशित का भूमिका भाग

आलेख

गोवर्धन यादव

रामायण के प्रणेता महर्षि वाल्मीकि एवं संत कवि तुलसीदास

आधुनिक समीक्षक रामकथा लिखे जाने के समय का निर्धारण अलग–अलग बतलाते हैं लेकिन वाल्मीकि रामायण के सप्तचत्वारिश सर्ग के श्लोक क्रमांक 15 को मैं यहां उल्लेखित करना चाहूँगा। यह प्रसंग तब का है जब माता सीता लोकापवाद की धुंध में घिरी हुईं थीं। रामजी की आज्ञा से लक्ष्मण उन्हें वाल्मीकि जी के आश्रम में छोड़ आने की आज्ञा देते हैं। गंगा–तट पर महर्षि के आश्रम के निकट पहुँचकर लक्ष्मण सीताजी से कहते हैं–"शुभे ! यह रहा गंगाजी के तट पर ब्रह्मार्षियों का पवित्र एवं रमणीय तपोवन. आप विषाद न करें। वे आगे यह भी कहते हैं...

राज्ञो दशरथस्यैव पितु मैं मुनिपंगवः
सखा परमको विप्रो वाल्मीकिः सुमहायशाः
पादच्छायामुपागम्य सुखमस्य महात्मनः उपवासपरैकाग्ना वस त्वं जनकात्मजे

अर्थात् यहाँ मेरे पिता राजा दशरथ के घनिष्ट मित्र महायशस्वी ब्रह्मर्षि मुनिवर वाल्मीकि रहते हैं, आप उन्हीं महात्मा के चरण की छाया का आश्रय ले यहाँ सुखपूर्वक रहें। जनकात्मजे ! आप यहाँ उपवास परायण और एकाग्र हो निवास करें। इसी आश्रम में सुखपूर्वक रहते हुए सीताजी ने दो पुत्रों को जन्म दिया।"

यामेव रात्रिं शत्रुघ्न पर्णशाला समाविशत
तामेव रात्रिं सीतापि प्रसूता दारकद्वयम

अर्थात् जिस रात को शत्रुघ्न ने पर्णशाला में प्रवेश किया था, उसी रात में सीता जी ने दो पुत्रों को जन्म दिया। इतना ही नहीं इन दो राजकुमारों ने राजा राम के

दरबार में रामचरित का गान सुनाया, जिसे सुनकर राजदरबारियों सहित श्रीरामजी को भी आश्चर्य हुआ था।

तां स शुश्राव काकुत्स्थ:पूर्वाचार्यविनिर्मिताम
आपूर्वां पाठ्यजातिं च गेयेन समलंकृताम।

अर्थात् श्रीरघुनाथजी ने वह गान सुना, जो पूर्ववर्ती आचार्यों के बताए हुए नियमों के अनुकूल था। संगीत की विशेषताओं से युक्त स्वरों के अलापने की अपूर्व शैली थी। उपरोक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि महर्षि वाल्मीकि जी श्री रामजी के समकालीन थे उन्होंने वही लिखा जो वे अपनी आँखों देख रहे थे।

इस रामकथा ने इतना विस्तार पा लिया था कि कि लोग कह उठे थे कि वह काव्य नहीं जिसमें रामकथा न हो, वह पुराण नहीं जिसमें राम कथा न हो, वह इतिहास नहीं जिसमें रामकथा न हो और वह संहिता नहीं जिसमें रामकथा न हो–

न तद काव्यं नहि यत्र रामः
न तत पुराणं नहि यत्र राम।
न चेतिहासो नहि यत्र रामः
न यत्र रामो नहि संहिता सा।

इस प्रकार धार्मिक साहित्य और ललित साहित्य दोनों ही क्षेत्रों में रामकथा गायी और लिखी गयी। रामतापनीयोपनिषद, रामरहस्योपनिषद, मुक्तिकोपनिषद, हरिवंशपुराण, विष्णु पुराण, भुशुण्डिरामायण, सत्योपाख्यान सदृश धार्मिक ग्रंथों और रघुवंश, भट्टिकाव्य, रामलिंगामृत, प्रतिमा नाटक, महावीर–चरित, उत्तररामचरित, अनर्घराघवम, बालरामायण, हनुमन्नाटक, आश्चर्यचूड़ामणि, प्रसन्नराघव, उन्मत्त राघव, प्रभृति ललित साहित्य के ग्रंथों में सुसंस्कृत भाषा से संबद्ध होकर रामकथा राम–साहित्य का विस्तार कर रही है।

संस्कृत युग के बाद प्राकृत और अपभ्रंश के युगो में भी रामकथा पर अनेको ग्रथों की रचना हुई हैं। विमलदेव सूरि का पउम चरियं, स्वयंभूदेवकृत पउम चरितम, पुष्पदंत का महा पुराण रघूकृत पद्म पुराण, आदि के नाम इस संबंध में लिए जा सकते हैं। तदनन्तर प्रचलित प्रांतों की अपनी–अपनी भाषाओं में रामकथा अथवा रामायण का विपुल साहित्य निर्मित हुआ. तमिल भाषा में कम्ब रामायण का निर्माण ईसा की बारहवीं शताब्दि में हुआ। तेलुगु भाषा में रंगनाथ, रामायण, तेरहवीं शताब्दि के प्रारंभ में रची गई। मलयालम भाषा में रामचरितम, चौदहवीं शताब्दि में कन्नड़ भाषा में तोरवे रामायण, सोलहवीं शताब्दि में असमिया भाषा में माधव कंदली, चौदहवीं सदी के अंत में एक रामायण लिखी गई जो उन्हीं के नाम से प्रसिद्ध हुई। बंगला भाषा में कृत्तिवस ने पन्द्रहवीं सदी के अंत में एक रामायण लिखी जो उनके नाम से प्रसिद्ध हुई, उड़िया भाषा में पन्द्रहवी शताब्दी में सारलदास ने और सोलहवीं शताब्दि के आरंभ में बलरामदास ने रामायणें लिखी जो उन्हीं के नाम से प्रसिद्ध हुई। सोलहवीं शताब्दी के आरंभ में बलरामदास ने रामायण लिखी जो उनके नाम से प्रसिद्ध हुई। ये सभी रामायण तुलसीदास जी के पूर्व में लिखी हुई कही जा सकती हैं। सोलहवीं शताब्दी के अंत में एकनाथ महाराज ने मराठी में भावार्थ रामायण लिखी। गुजराती भाषा में उन्नीसवीं शताब्दी में गिरधरदास जी ने रामायण लिखी और इसी शताब्दी में मुंशी जगन्नाथ खुश्तर ने उर्दू भाषा में रामायण लिखी। रामायण लेखकों की फ़ेहरिस्त काफ़ी लंबी है। केवल इतना ही कहा जा सकता है कि प्रभु श्रीराम, न केवल भारतवर्ष में बल्कि पूरे

विश्व में पूजे जाते रहे हैं।

जन–जन के नायक श्रीराम की कथा सदा से ही भारतीय मनीषा के मन को प्रमोदित कर देने वाली रही है, को संत कवि श्री तुलसीदास जी ने जनभाषा में लिखा और इस तरह उन्होंने मानस के रूप में एक महान ग्रंथ संसार को दिया। तुलसी दास जी संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान थे, बहुश्रुत थे। यह वह समय था जब भारत में यवनों का राज था जिसे "मुगल काल" कहा गया। ईस्वी 13 वीं से 15 वीं शताब्दी तक जो भारत था उसकी अपेक्षा16–17 वीं शताब्दी के भारत में राजनीतिक स्थिरता अधिक आ चुकी थी, परन्तु उस समय तक अनेक ऐसी प्रवृत्तियों का प्रवेश भारतीय समाज में हो गया था जो भारतीय परंपरा से बिल्कुल भी मेल नहीं खाती थी। अपने प्रसिद्ध ग्रंथ "रामचरित मानस" और "कविता–वली" में उन्होंने कई प्रकार से इनका संकेत भी किया है।

संत कवि तुलसी की सबसे प्रमुख देन –

उन्हें तत्कालीन परिस्थितियों में भारतीय संस्कृति का स्वरूप और इसका विवेचन प्रस्तुत करना आवश्यक लगा। तुलसी से पहले भी भारतीय संस्कृति के ध्वजा–वाहक के रूप में अनेक मनीषियों ने अपने विचार प्रस्तुत किए थे। भगवान श्री कृष्ण ने गीता के माध्यम से और इसी प्रकार वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, शंकराचार्य आदि ने अपने–अपने युगों में भारतीय संस्कृति के बारे में विस्तार से लिखा। कबीर और उनके समकालीन मनीषी ऐसे हुए जिन्होंने इस कार्य को संपादित किया था। आधुनिक युग में स्वामी दयानंद, तिलक, अरविंद, टैगोर, गांधी आदि ने भी भारतीय संस्कृति का विवेचन हमारे सामने उपस्थित किया।

सबसे बड़ी समस्या तुलसीदास जी के सामने यह थी कि वे किस माध्यम से भारतीय संस्कृति को प्रस्तुत करें। वे नहीं चाहते थे कि शंकराचार्य की तरह संस्कृति के मात्र दार्शनिक पक्ष को प्रमुखता दें। उन्होंने लोकरंजक रामकथा जिसमें रावण भी था, को जनभाषा के माध्यम से हमारे सामने प्रस्तुत किया।

भारतीय संस्कृति की झांकी जो लोकरंजक कथा के माध्यम से हमारे बीच आयी, उसका जनमानस ने पुरजोर स्वागत किया। उन्होंने वर्णाश्रम तथा अन्य भारतीय पारम्परिक व्यवस्थाओं के आधार पर, जो देशकाल के अनुरुप थी, संस्कृति को हमारे सामने रखा। इसमें प्रजा के क्या कर्त्तव्य होने चाहिए, राजा के क्या कर्त्वय होने चाहिए और राजधर्म क्या होना चाहिए, समाज की व्यवस्था किस प्रकार की होनी चाहिए, जनहित की भावनाओं को किस प्रकार पोषित किया जाना चाहिए, इस पर विस्तार से प्रकाश डाला। आपका यह एक अति महत्वपूर्ण कार्य था।

दूसरा महत्वपूर्ण कार्य समन्वय का था। समाज में प्रचलित वैदिक–पौराणिक धारा जो भारतीय संस्कृति का मेरुदंड कही जा सकती है। दूसरी तंत्र संप्रदाय की और तीसरी निर्गुण विचार धारा की थी, जो पौराणिक से पृथक अनेकों रूपों में विद्यमान थी और चौथी विचारधारा थी सूफ़ी विचारधारा। जो मध्य एशिया तथा ईरान से हमारे बीच आयी थी। संत कवि तुलसीदास जी ने उस समय अपने मूल वैदिक स्रोत को ग्रहण किया जो देशकाल के अनुरुप अन्य धाराओं में श्रेष्ठ थी।

समन्वय का महत्वपूर्ण कार्य गोस्वामी जी के काल में हुआ। जो राजनैतिक परिस्थितियाँ थी वह हिन्दुओं के अनुकूल हो गयी। अकबर स्वयं

समन्वयवादी था लेकिन उसे इस दिशा में ज्यादा सफ़लताएं प्राप्त नहीं हुई थी जितनी की गोस्वामी तुलसीदास जी को मिली। उन्होंने तत्कालीन विभिन्न प्रवृत्तियों की अच्छाइयों को लेकर एक समन्वित जीवन–दर्शन हमारे सामने रखा और प्रांजल भक्ति का मार्ग अपनाने को कहा। इस समय ज्ञान–मार्ग या कठोर कर्ममार्ग लोगों को सध नहीं पा रहा था, इसलिए उन्होंने प्रांजल –भक्ति को हमारे सामने रखा। इस मार्ग को कोटि –कोटि मानवों को गहराई से प्रभावित किया। तुलसीदास जी का यह एक बड़ा महत्वपूर्ण काम था, और वह था अपनी जन–भाषा को महत्व प्रदान करना। ईस्वी चौथी शती से लेकर सोलहवीं शती तक संस्कृत हमारे देश की भाषा रही ह। इससे पहले हमारे यहां वैदिक भाषा राष्ट्रभाषा थी। उसके बाद पाणिनीय संस्कृत हमारी राष्ट्रभाषा रही। गुप्तवंशी सम्राट ने संस्कृत को पूरे देश की राष्ट्रभाषा बनाया। उसके बाद तुलसीजी के द्वारा हिन्दी को वस्तुतः राष्ट्रभाषा का पद दिया गया। यद्दपि वे संस्कृत भाषा के प्रकाण्ड पंडित थे। उन्होंने रामचरित मानस में संस्कृत का सीमित प्रयोग किया और जनभाषा को अधिक स्थान देते हुए उसे गौरव प्रदान किया। वे राज दरबारी कवि नहीं थे। शायद होते तो वे निर्भीकता के साथ लिख नहीं पाते और एक जीवन–दर्शन का जो निर्माण उन्होंने करना चाहा था, शायद ही कर पाते। उन्होंने निर्भीकता के साथ भारतीय संस्कृति को सामने रखा। यह वह संस्कृति थी जिसे हम प्राचीन काल से पाते हैं।

भारतीय संस्कृति के जिस व्यापक रुप को गोस्वामीजी ने विवेचना के लिए राम के चरित्र को ही क्यों अपनी लेखनी का माध्यम बनाया?. वे किसी प्राकृत जन को ले सकते थे या फ़िर भगवान के किसी और स्वरूप को ले सकते थे। लेकिन उन्होंने राम को ग्रहण किया क्योंकि वे मर्यादा–पुरुषोत्तम थे। तुलसीदास जी ने इसे युक्तिसंगत समझा और रामचरित को ही संस्कृति की व्याख्या–हेतु माध्यम बनाया। यहां और यह समझने की जरुरत है कि श्रीकृष्ण जी का चरित अत्यन्त ही दुरह है। अतः तुलसीदासजी को राम का उद्दात्त लोक–संग्राहक रूप विशेष रूप से भाया। उन्होंने देखा कि राम, पुरुषोत्तम होते हुए भी आदर्श जीवन–दर्शन के लिए सबसे अधिक उपयुक्त हैं। उन्होंने स्वयं देखा भी कि राम–चरित ने न केवल भारत में ही अपना प्रभाव जमा लिया था बल्कि भारत के बाहर भी दक्षिण–पूर्व एशिया के अनेक देशों में रामकथाएं अनेक रूपों में प्रचलित हो चुकी थी।

संसार में मुख्यतः दस प्रकार की बुराइयां पायी जाती हैं। वे हैं– क्रोध, कपट, क्रूरता, कलह, प्रतिकार, अहंकार, लोभ, मोह, बैर और हठ। श्रीरामजी का इनसे दूर–दूर तक कोई नाता नहीं था। ठीक इससे उलट वे करुणा के सागर हैं, दीनदयाल है, सहज रूप से मन को भा जाने वाले हैं, कमल नयन हैं, माया, गुण और ज्ञान से परे हैं, सुख के सागर हैं, हितकारी हैं, प्रसन्नवदन है, मर्यादा पुरुषोत्तम हैं, दुखों को हरने वाले हैं। आपके रोम–रोम में माया के रचे हुए ब्रह्मांडों के समूह हैं, भक्तवत्सल है, सहज ही प्रसन्न हो जाने वाले हैं, आप गुणों के खान हैं। भक्तों को अभय देने वाले हैं और दुष्टों के संहार करने के लिए आयुध धारण किए हुए हैं। आप विनम्र हैं, लोभ–लाभ–हानि, बैर और हठ से कोसों दूर हैं, मुनियों के मन को हरने वाले है, इन्हीं सारी विशेषताओं

के कारण श्रीराम पूरे विश्व में पूजे गए और उन पर विदेशियों ने भी रामायणें लिखीं और उनके भव्य मन्दिर तक बनाए।

विदेशी धरती पर भी लिखी गई रामकथा

इंडोनेशिया : विश्व का एक छोटा सा देश है, जिसमें दुनिया के सबसे ज्यादा मुस्लिम इंडोनेशिया में ही रहते हैं। इंडोनेशिया के लोग 'रामायण' के दीवाने हैं। यहाँ रचित रामायण का नाम काकबिन रामायण है, यहाँ के लोग भगवान राम को एक महान इंसान के रूप में पूजते हैं। इस देश की कुल आबादी लगभग 23 करोड़ है और यहां की कुल आबादी के तक़रीबन 90 प्रतिशत लोग मुस्लिम हैं। जैसे की हमारे भारत में राम की नगरी अयोध्या है, ठीक उसी तरह से इंडोनेशिया में भी एक जगह राम की नगरी है जिसे योग्या के नाम से जाना जाता हैं, जैसा कि हमारे देश के हिन्दुओं में रामायण के प्रति काफी आस्था है और लोग काफी श्रद्धा से इस पर विश्वास करते है। वैसे ही इंडोनेशिया के जो लोग है उन्हें भी रामायण में काफी आस्था है और यहाँ के लोग राम को एक महान राजा के रूप में मानते है। भारत के लोग जो आदिकवि ऋषि वाल्मिकि द्वारा रचित संस्कृत भाषा में लिखी गयी रामायण को मानते हैं, वैसे ही इंडोनेशिया के मुस्लिम लोग कावी भाषा में लिखी सेरतराम, सेरत कांड, राम के लिंग रामायण को मानते है ।

यह जानकर बहुतों को आश्चर्य होगा कि इंडोनेशिया में नौसेना अध्यक्ष को 'लक्ष्मण' कहा जाता है। साथ ही यहाँ के लोग माँ सीता को 'सिंता' और भगवान् श्री हनुमान को 'अनोमान' के नाम से पूजते है। इंडोनेशिया में तो भगवान् हनुमान सबसे ज्यादा ही लोकप्रिय हैं। जब यहाँ के लोग बड़ी संख्या में देश की राजधानी जकार्ता में सड़कों पर आजादी का जश्न मनाते है, उस वक्त हनुमान जी का रूप लेकर परेड में सम्मिलित होते हैं। इस देश में रामायण का इतना गहरा प्रभाव है कि यहां की सारी संस्कृति ही रामायण की पारम्परिक श्रद्धा से जुडी हुई है, साथ ही इस देश के कई जगहों में रामायण के अवशेष भी मिले है तथा रामकथा की नक्काशी वाले पत्थर भी यहां मिलते हैं। इसी तरह तिब्बत में तिब्बती रामायण, पूर्वी तुर्किस्तान की खोतानीरामायण, जावा का सेरत राम, सैरीराम, राम के लिंग, पातानी रामकथा, इण्डोचायना की रामकेर्ति (रामकीर्ति), खमैर रामायण, नेपाल के भक्त कवि की "भानुभक्त रामायण"। कंबोडिया की रामकर, पूर्वी तुर्किस्तान की खतानी रामायण, जावा की सेरतराम, सरीराम, राकेलिण्ग, पातानीरामकथा, बर्मा की यूतोकी रामायण, रामवत्थु तथा महा राम रामायण उल्लेखनीय है।

कंप्युचिया के अनेक शिलालेखों में रामकथा उकेरी गई है। वियतनाम के एक प्राचीन शिला लेख में वाल्मीकि जी के मन्दिर का उल्लेख मिलता है, किंतु रामकथाएं लोक काथाओं के रुप में कही–सुनी जाती है। लाओस की संस्कृति पर भारतीयता की गहरी छाप है। फ़्रलक फ़्रलाम (रामजातक), खाय थोरपी, ब्रहमचक्र और लंका नोईकृराम कथा पर आधारित चार रचनाएं उपलब्ध हैं। थाईलैंड का रामकथा साहित्य बहुत समृद्ध है। रामकथा पर आधारित निम्नांकित प्रमुख रचनाएँ वहाँ उपलब्ध हैं– (१) तासकिन रामायण (२) सम्राट राम प्रथम की रामायण (३) सम्राट राम द्वितीय की रामायण (४) सम्राट राम चतुर्थ की रामायण (पद्यात्मक) (५) सम्राट राम

चतुर्थ की रामायण (संवादात्मक) (६) सम्राट राम षष्ठ की रामायण (गीतिसंवादात्मक)। आधुनिक खोजों के अनुसार बर्मा में रामकथा साहित्य की १६ रचनाओं का पता चला है जिनमें रामवत्थु प्राचीनतम कृति है। मलयेशिया में रामकथा से संबद्ध चार रचनाएँ उपलब्ध है (१) हिकायत सेरी राम, (२) सेरी राम, (३) पातानी रामकथा और (४) हिकायत महाराज रावण। फिलिपींस की रचना महालादिया लावन का स्वरूप रामकथा से बहुत मिलता–जुलता है किंतु इसका कथ्य बिल्कुल विकृत है।

चीन में रामकथा बौद्ध जातकों के माध्यम से पहुँची थीं। वहाँ अनामक जातक और दशरथ कथानम का क्रमशः तीसरी और पाँचवीं शताब्दी में अनुवाद किया गया था। दोनों रचनाओं के चीनी अनुवाद तो उपलब्ध हैं, किंतु जिन रचनाओं का चीनी अनुवाद किया गया था, वे अनुपलब्ध हैं। तिब्बती रामायण की छह पांडुलिपियाँ तुन–हुआन नामक स्थल से प्राप्त हुई हैं। इनके अतिरिक्त वहाँ राम कथा पर आधारित दमर–स्टोन तथा संघ श्री विरचित दो अन्य रचनाए। एशिया के पश्चिमोत्तर सीमा पर स्थित तुर्किस्तान के पूर्वी भाग को खोतान कहा जाता है। इस क्षेत्र की भाषा खोतानी है। खोतानी रामायण की प्रति पेरिस पांडुलिपि संग्रहालय से प्राप्त हुई है। इस पर तिब्बत्ती रामायण का प्रभाव परिलक्षित होता है। चीन के उत्तर–पश्चिम में स्थित मंगोलिया में राम कथा पर आधारित जीवक जातक नामक रचना है। इसके अतिरिक्त वहाँ तीन अन्य रचनाएँ भी हैं जिनमें रामचरित का विवरण मिलता है। जापान के एक लोकप्रिय कथा संग्रह होबुत्सुशु में संक्षिप्त रामकथा संकलित है। इसके अतिरिक्त वहाँ अंधमुनि पुत्रवध की कथा भी है। श्रीलंका में कुमार दास के द्वारा संस्कृत में जान की हरण की रचना हुई थी। वहाँ सिंहली भाषा में भी एक रचना है, मलयराजकथाव। नेपाल में रामकथा पर आधारित अनेकानेक रचनाएँ जिनमें भानुभक्तकृत रामायण सर्वाधिक लोकप्रिय है। सम्राट अकबर ने सन 1588 में रामायण का अनुवाद फ़ारसी में करवाया था, जो आज जयपुर में संग्रहालय में सुरक्षित रुप से रखी हुई है। इसमें 176 चित्र बनाए गए है। इसी के साथ कतार के दोहा में भी मुगल रामायण है जो अकबर की मां हमीदा बानु बेगम नें बनवाई थी।

इस तरह हम देखते हैं कि वाल्मीकि जी ने अपने "रामायण" ग्रंथ के प्रभाव से संसार को एक अत्यंत ही आकर्षक महापुरुष और एक अत्यन्त ही श्लाघ्य परिवार मिला। संत कवि तुलसीदास जी ने अपने "मानस–ग्रंथ" के प्रभाव से उस आकर्षक महापुरुष को जन–जन का इष्ट देव को आत्मीयतायुक्त बना दिया। उनके राम न केवल कुटियों से राजमहल तक, आवाल–वृद्ध–वनिता सबमें रम गए। जिन लोगों ने रामकथा का साहित्य रचने हेतु कलाम उठाई वे राम के लोक–रंजक रूप पर नहीं किंतु लोकरक्षक के रुप पर ही अधिक आकृष्ट हुए।

समाज के ऊपर इन दो साहित्यकारों का जो ॠंण है वह किसी भी प्रकार से भुलाया नहीं जा सकता।

103, कावेरी नगर, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) 480001
मो. 9424356400, 8319806243

REVISED

सत्यमेव जयते

भारत सरकार
GOVERNMENT OF INDIA
भारत के प्रेस महापंजीयक
PRESS REGISTRAR GENERAL OF INDIA

पंजीयन प्रमाण–पत्र
CERTIFICATE OF REGISTRATION

प्रमाणित किया जाता है कि **प्रेस तथा नियतकालिक पत्रिका पंजीकरण अधिनियम, 2023** के अंतर्गत इस नियतकालिक पत्रिका को पंजीकृत कर लिया गया है:

This is to certify that this Periodical has been registered under the **Press and Registration of Periodicals Act, 2023** :

1. शीर्षक Title	**TULSI MANAS BHARTI**
2. पंजीयन संख्या Registration Number	**56428 /1992**
3. प्रकाशन की भाषा Publication Language	**हिन्दी HINDI**
4. आवधिकता Periodicity	**मासिक MONTHLY**
5. प्रकाशक / Publisher	**RAGHUNANDAN SHARMA**
पता/Address	**E-8/18, DANAPANI RESTAURANT KE PASS, ARERA COLONY, DISTRICT- BHOPAL, MADHYA PRADESH- 462039**
6. प्रकाशन का स्थान Place of publication	**TULSI MANAS PRATISHTHAN, MANAS BHAWAN, SHYAMLA HILLS, DISTRICT- BHOPAL, MADHYA PRADESH- 462002**
7. मुद्रक / Printer	**RAGHUNANDAN SHARMA**
पता/Address	**E-8/18, DANAPANI RESTAURANT KE PASS, ARERA COLONY, DISTRICT- BHOPAL, MADHYA PRADESH- 462039**
8. मुद्रणालय (नाम एवं पता) Press (Name & Address)	**KRISHI SHODH PRAKASHAN** **C- 18, NARAYAN NAGAR, DISTRICT- BHOPAL, MADHYA PRADESH- 462026**
9. सम्पादक /Editor	**PRABHUDAYAL MISHRA**
पता/Address	**35, EDEN GARDEN, CHUNA BHATTI, KOLAR ROAD, DISTRICT-BHOPAL, MADHYA PRADESH- 462016**
10. स्वत्वाधिकारी/ Owner Name	**TULSI MANAS PRATISHTHAN**
पता/Address	**TULSI MANAS PRATISHTHAN, MANAS BHAWAN, SHYAMLA HILLS, DISTRICT- BHOPAL, MADHYA PRADESH- 462002**

सत्यमेव जयते
PRESS REGISTRAR GENERAL OF INDIA

दिनांक /Date: 20 NOV 2025

(योगेश कुमार बवेजा / Yogesh Kumar Baweja)
भारत के प्रेस महापंजीयक
Press Registrar General of India

पं. रमाकांत दुबे स्मृति समारोह - 2026
मानस भवन में श्रीरामकथा संपन्न

प्रवचनकर्त्ता : परमपूज्य दीदी भक्तिप्रभा जी

दिनांक 1 से 5 फरवरी 2026

तुलसी मानस प्रतिष्ठान के रामानुरागी पूर्व कार्याध्यक्ष पं.रमाकांत दुबे की पुण्य स्मृति में मानस भवन में पंच दिवसीय श्रीरामकथा में पूज्य दीदी भक्तिप्रभा जी ने व्यासपीठ से 'राम भगत प्रिय लागहिं जेही। तेहि उर बसहु सहित बैदेही।' विषय के अंतर्गत श्रीरामचरित मानस के अयोध्या काण्ड में प्रभु श्रीराम वाल्मीकि के आश्रम गये। आश्रम का अति सुंदर वातावरण देखकर प्रभु श्रीराम के हृदय को प्रसन्नता हुई। महर्षि वाल्मीकि जी ने प्रभु श्रीराम के निवास स्थान बताये उनमें एक स्थान के बारे में कहा गया 'राम भगत प्रिय लागहिं जेहि तेहि उर बसहु सहित बैदेही' अर्थात् जिन्हें भक्त प्रिय लगते हैं उनके हृदय में हे श्रीराम जानकी जी सहित निवास करें। आपने कहा कि ईश्वर निर्गुण, निराकार है लेकिन भक्तों के भाव के कारण वह सगुण, साकार के रूप में भी अवतरित होता है। ज्ञानियों को ईश्वर के स्वरूप का अनुभव अपने हृदय में होता है किन्तु भक्त अपनी भक्ति के प्रभाव से भगवान के रूप को अपने हृदय में ही प्रकट कर लेते है। आपने भगवान शिव और काकभुशुडिजी की भक्ति के संबंध में कहा कि दोनों भगवान के स्वरूप को जानने वाले है लेकिन जब–जब श्रीराम का प्राकट्य होता है तब बालस्वरूप के दर्शन करने के लिये वे अयोध्या जाते है।

अपने स्वागत उद्बोधन में कार्याध्यक्ष श्री रघुनंदन शर्मा ने कहा कि तुलसी मानस प्रतिष्ठान में प्रतिवर्ष पं.रमाकांत दुबे की पुण्य स्मृति में श्रीरामकथा के लिये दीदी भक्तिप्रभाजी नियमित प्रवचन के लिये पधारती रही हैं। प्रतिष्ठान का विकास उन्होंने निष्काम भाव से किया जिसके फलस्वरूप आज 50 वर्षों से निरंतर सत्संग हो रहा है। प्रतिष्ठान में सत्संग के साथ साहित्यिक सांस्कृतिक कार्यक्रमों का समावेश किया गया है।

पूज्य दीदी भक्तिप्रभा जी ने व्यासपीठ से 'राम भगत प्रिय लागहिं जेही। तेहि उर बसहु सहित बैदेही' विषय के अंतर्गत कहा कि वाल्मीकि जी भगवान श्रीराम से कहते हैं कि आपने मुझसे पूछा है कि मैं कहाँ रहूँ परन्तु मैं पूछते संकुचाता हूँ कि संसार में कोई ऐसा स्थान नहीं है जहां आप नहीं है। ईश्वर सर्वत्र व्याप्त है। इसका आध्यात्मिक अर्थ बताते हुए आपने कहा कि जब हम संपूर्ण जगत को ईश्वरमय दृष्टि से देखेंगे तब हमारी दृष्टि में न केवल अपने पराये का भेद समाप्त हो जाता है बल्कि हमारे कर्मों में भी सुधार होता है। महर्षि वाल्मीकि इसी संदर्भ में भगवान श्रीराम से कहते है कि जिनके हृदय में न तो काम, क्रोध, मद, अभिमान और मोह है न लोभ है न क्षोभ है न राग द्वेष है न कपट है। हे श्रीराम! आप उनके हृदय में निवास करें। भगवान के इस आध्यात्मिक

निवास की व्याख्या करते हुए आपने कहा कि ऐसे भक्त सबके प्रिय और सबके हितकारी होते है। जो विचार करके सत्य और प्रिय वचन बोलते है। इसलिए रामकथा हम सबके जीवन में आंतरिक परिवर्तन करती है।

तृतीय दिवस पूज्य दीदी भक्तिप्रभा जी ने कहा कि बाल्मीकिजी भगवान श्रीराम से कहते हैं कि आप तो सर्वज्ञ है। आप तो भक्तों के अन्तःकरण में विराजते हैं। आपको भक्तों का सरल, सहज प्रेम, भक्ति और समर्पण प्रिय है। आपने आगे कहा कि प्रभुश्रीराम के चौदह वर्ष वनवास जाने में प्रभु श्रीराम ही कारण है। आपने आनंदरामायण का उल्लेख करते हुए कहा कि बाललीला में प्रभुश्रीराम ने जब माता कैकेयी के महल में बाल लीला करते हुए एक दिन पीछे से उनकी आंखों को अपने कोमल हाथों से ढांक लिया और बोले माता! बताओं मैं कौन हूँ तब माता कैकेयी तो चारो भाईयों को सहज ही पहचानती थी फिर भी उन्होनें कहा कि मेरा प्रिय लक्ष्मण है। तब प्रभुश्रीराम सामने अपने सुंदर दिव्य स्वरूप में आये और कहा माता आप शर्त हार गयी। आप जो भी वचन कहेगी मैं जब युवराज बनूंगा तब आप अपना वचन मांग लेना। प्रभुश्रीराम ने बाल्मीकि आश्रम में ही महर्षि बाल्मीकि को अपने वनवास की पूरी कथा कही और माता कैकेयी के बारे में कहा। आपने अध्यात्मिक व्याख्या करते हुए कहा कि प्रभुश्रीराम अपने भक्तों को सहज ही पहचान लेते है। प्रभु को ऐसे भक्त सबसे प्रिय और हितकारी लगते है जो विचार करके सत्य और प्रिय वचन बोलते है।

वाल्मीकिजी भगवान श्रीराम से कहते हैं कि आपने मुझसे पूछा है कि मैं कहां रहूं। परन्तु मैं पूछते सकुंचाता हूं कि संसार में कोई ऐसा स्थान नहीं है जहां आप नहीं है। आप वेदों की मर्यादा के रक्षक जगदीश्वर हैं और जानकीजी माया हैं, जो कृपा के भण्डार आपकी रुख पाकर जगत का सृजन, पालन एवं संहार करती है। आप भक्तों के हृदय में सदा विराजमान रहते है। जिन भक्तों के हृदय में आपका निवास है और जिन्होंने अपने नेत्रों को चातक बना रखा है,जो आपके दर्शन–रूपी मेघ के लिये सदा लालायित रहते है। प्रभु! आप उन लोगों के हृदयरूपी सुखदायी भवन में भ्राता लक्ष्मणजी एवं जानकीजी सहित निवास करें। आपके भक्तों का हृदय अत्यंत निर्मल है। आपको भक्तिभाव से प्रतिदिन स्मरण करते है। जो भक्त आपके चरणकमलों का स्मरण कर तीर्थस्थान जाते है आप उनके मन में निवास कीजिये।

समापन दिवस पर पूज्य दीदी भक्तिप्रभा जी ने कहा कि आप वह स्थान बतलाइये जहाँ मैं लक्ष्मण और जानकी जी के साथ जाऊँ और वहां सुन्दर पत्तों और घास की कुटी बनाकर कुछ समय निवास करूँ।

वाल्मीकिजी भगवान श्रीराम से कहते हैं कि आपने मुझसे पूछा है कि मैं कहाँ रहूँ परन्तु मैं पूछते सकुंचाता हूं कि संसार में कोई ऐसा स्थान नहीं है जहां आप नहीं है। जो गुणों को आपका और दोषों को अपना समझता है, जिसे एकमात्र आपका का ही आश्रय हैं, आपका ही भरोसा है। आपके भक्त जिसे प्रिय हैं, उनके हृदय में आप बसिए ।

आपने आध्यात्मिक व्याख्या करते हुए कहा "राम भगत प्रिय लागहिं जेही": इसका अर्थ है जिसे राम के भक्त, जो स्वयं राम के स्वरूप हैं, प्यारे लगते हैं। यह भक्त की पहचान है कि वह केवल प्रभु से ही नहीं, बल्कि उनके भक्तों से भी प्रेम करता है, जो सच्ची भक्ति की निशानी

है।"तेहि उर बसहु सहित बैदेही": 'तेहि उर' (उसके ह्रदय में) और 'बसहु' (आप निवास करें)। प्रभु राम और माता सीता (बैदेही) उस भक्त के ह्रदय में स्थायी रूप से बस जाते हैं।

प्रवचन कार्यक्रम के विभिन्न दिवस में मुख्य अतिथि के रूप में मा. श्री सुरेश पचौरी पूर्व मंत्री भारत सरकार, मा.श्री कौशलेन्द्र विक्रम सिंह जिलाध्यक्ष भोपाल, मा.श्री कप्तान सिंह सोलंकी पूर्व राज्यपाल, मा.श्री प्रहलाद सिंह पटेल ग्रामीण विकास एवं पंचायत मंत्री एवं मा.श्री आलोक संजर पूर्व सांसद उपस्थित थे।

प्रवचन कार्यक्रम में दिनांक 4 फरवरी 2026 को श्री वैभव कालरा स्मृति पुरस्कार 2026 के अंतर्गत सुश्री सपना मिश्रा, को कक्षा 10वीं शा. कन्या उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, मंडीदीप रायसेन में राज्य की प्रावीण्य सूची में स्थान प्राप्त करने पर, श्रीमती शारदा देवी दुबे स्मृति पुरस्कार 2026 के अंतर्गत महिला समाज सेवी सम्मान मालिनी देवी दासी (डॉ.ममता महान्ति) भोपाल को एवं देवकीनंदन मिश्र स्मृति गौसेवा पुरस्कार 2026 के अंतर्गत समाजसेवी श्री प्रमोद नेमा, भोपाल को प्रदान किया गया।

कार्यक्रम का कुशल संचालन श्री माधव सिंह दांगी ने किया। आभार प्रदर्शन श्री देवेन्द्र रावत ने किया।

सचिव

आंचलिक समाचार

पचामा में 59वाँ श्री रामचरितमानस सम्मेलन का समापन

उदयपुरा, रायसेन। उदयपुरा के समीपस्थ ग्राम पचामा में 59 वा रामचरितमानस सम्मेलन का समापन हुआ, इस सम्मेलन का शुभारंभ आज से 59 वर्ष पूर्व ब्रह्मलीन बापौली वाले गुरुजी, पूज्य श्री सुंदरलाल जी दुबे, ब्रह्मलीन श्री चंद्र हंस जी महाराज के पावन सान्निध्य में हुआ था। जिसे पचामा वासियों ने परम पूज्य स्वामी नित्यानंद जी गिरी महाराज के मार्गदर्शन और आशीर्वाद से आज भी प्रतिवर्ष आयोजित किया जाता है। उल्लेखनीय है कि वर्षभर भी पूज्य महाराज श्री के मार्गदर्शन में रायसेन जिले के उदयपुरा तहसील के ग्राम, ग्राम में प्रति सप्ताह मानस यात्रा भी निकली जाती है। इस मानस यात्रा में विद्वान, वक्ताओ के द्वारा श्री रामचरित मानस के प्रसंगों पर प्रवचन दिए जातेहैं। इस मानस यात्रा की उल्लेखनीय बात यह कि मानस के प्रसंगों को जीवन व्यवहार से जोड़कर समाज में परिवर्तन लाने का प्रयास किया जाता है। इसके प्रभाव से न केवल साक्षरता दर बढ़ी है, अपितु बाल विवाह, नशा मुक्ति, गौरक्षा जैसे महत्वपूर्ण विषयों पर भी सकारात्मक परिणाम ग्रामों में देखने मिल रहे हैं। मानस यात्रा का सफल संचालन श्री चतुर नारायण रघुवंशी एडवोकेट उदयपुरा द्वारा सतत श्रद्धा के साथ किया जा रहा है। रामायण सम्मेलन में इस वर्ष पूज्य स्वामी नित्यानंद गिरी जी महाराज के अलावा बृजेश दीक्षित जबलपुर प्रकाश मनमोहन मुदगल जी सुहागपुर सुरेंद्र कुमार जी शास्त्री कोमल प्रसाद जी शास्त्री आदि ने इस वर्ष समापन दिवस पर श्री राम कथा पर प्रवचन दिए।

प्रस्तुति सुरेन्द्र सिंह रघुवंशी

मुख्य अतिथि के रूप में मा. श्री आलोक संजर पूर्व सांसद,
श्री रघुनंदन शर्मा कार्याध्यक्ष, श्री विजय अग्रवाल कोषाध्यक्ष
एवं अन्य सदस्यगण

मा. श्री कौशलेन्द्र विक्रमसिंह जिलाध्यक्ष भोपाल एवं
श्री प्रभुदयाल मिश्र पूज्य दीदी का स्वागत करते हुए

मुख्य अतिथि मा. प्रहल्लाद पटेल कु. सपना मिश्रा को
कक्षा 10 की राज्य की प्रावीण्य सूची में स्थान पाने पर
पुरस्कृत करते हुए

श्रीमती शारदा देवी स्मृति पुरस्कार से
मालिनी देवीदासी को सम्मानित करते हुए मुख्य अतिथि

श्री देवकी नंदन मिश्र स्मृति गौसेवा पुरस्कार से
श्री प्रमोद नेमा को पुरस्कृत करते हुए मुख्य अतिथि एवं
अन्य सदस्यगण

सुधी श्रोतागण

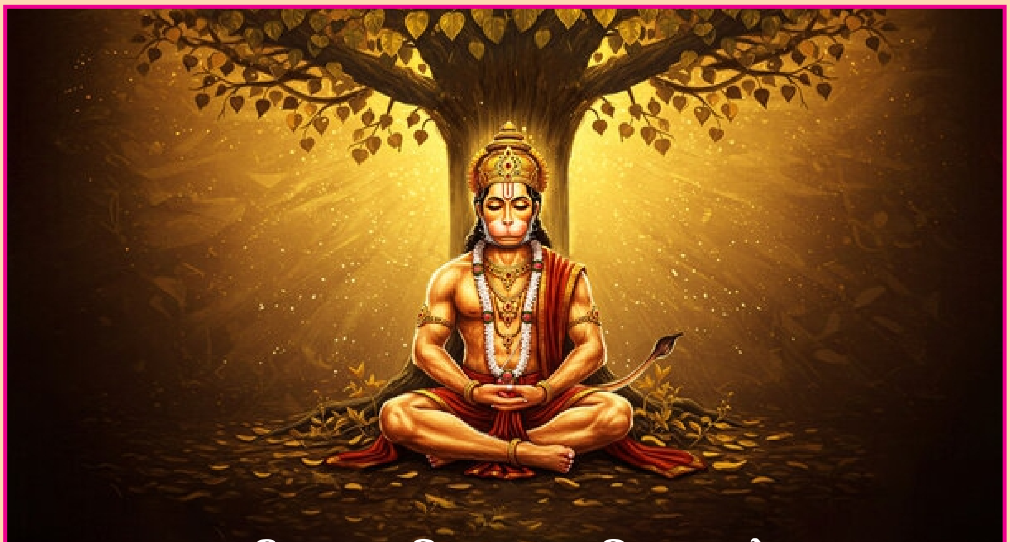

तुलसी मानस प्रतिष्ठान का प्रतिष्ठा आयोजन

श्री हनुमान जयंती महोत्सव 2026

॥ हनुमत् कथा ॥

दिनांक 31 मार्च से 2 अप्रैल 2026

पूज्य पं. श्री श्याम जी मनावत

के श्रीमुख से

: कार्यक्रम :

दिनांक 31 मार्च एवं 1 अप्रैल, 2026

प्रवचन - सायं 6:30 बजे

दिनांक 2 अप्रैल, 2026

सुंदरकाण्ड पारायण - प्रातः 10:00 बजे से

प्रवचन - 12:00 से 1:30 बजे तक

महाप्रसादी - 1:30 बजे से

स्थान : श्री रामकिंकर सभागार, मानस भवन, भोपाल

आप सभी से निवेदन है कि सपरिवार इष्टमित्रों सहित पधारकर पुण्यार्जन करें...

सौजन्य : श्री संजीव कुमार पुरी, श्रीमती संध्या पुरी

कैलाश जोशी
सचिव

राजेन्द्र शर्मा
संयोजक

रघुनंदन शर्मा
कार्याध्यक्ष

स्वामी-तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश, प्रकाशक श्री रघुनंदन शर्मा और मुद्रक कृषि शोध प्रकाशन, 18-सी नारायण नगर, होशंगाबाद रोड़, भोपाल द्वारा श्री श्रद्धा ऑफसेट, प्रेस कॉम्प्लेक्स, ज़ोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल 462011 से मुद्रित और तुलसी मानस प्रतिष्ठान मध्यप्रदेश, मानस भवन, भोपाल से प्रकाशित।
प्रधान संपादक : प्रभुदयाल मिश्र एवं संपादक : देवेन्द्र कुमार रावत